हिन्दी के तरुण कथाकारों में ओंकार शरद का अपना अलग व विशिष्ट स्थान है। साधारण ढङ्ग से चुभती बात कह देने की कला में वे माहिर हैं।

३७ की उम्र, साधारण कद, प्रभावशाली व्यक्तित्व, रुखे बालों के साथ करुणापूर्ण चेहरा। राजनीति के नशे के कारण बातचीत में जरा उग्र, पर मिठास की भी कमी नहीं।

साहित्य में अच्छा लिखा जाय, अच्छे लोग हों, साहित्यिक व्यक्तित्व महान हो, यही चिन्ता रात दिन उन्हें घेरे रहती है। साहित्य जनता का बने, साहित्य देश के जागरण का आधार हो, यही फिक्र उन्हें तबाह किए है। सारे जहाँ का दर्द अपने सिर पर लादे भटक रहे हैं। उनका इस काम में कोई साथी नहीं। इसी बेकली के बीच उपन्यास, कहानियाँ, शब्द-चित्र और जीवनी के माध्यम से अपने मन की भड़ास निकाला करते हैं।

राजनीति में वे साहित्यिक माने जाते हैं और साहित्य में राजनीतिक। दुर्दशा है बेचारे की! लेकिन शरद जी किसी वक्त का इन्तजार कर रहे हैं जब उनके दिल का दर्द दुनिया समझ सकेगी।

एक था दादा······ देश का सेवक······ झंडा उठाया, नंगे पाँव चला, हर संभव त्याग किया······ फिर सुराज हुआ······ दादा नेता बना······ देश के लिए नेता ····· पर छोटू के लिए दानव और उसकी बहू के लिए लम्पट······
विश्वास नहीं होता कि सुराज होते ही दादा इतना कैसे बदल गया ?
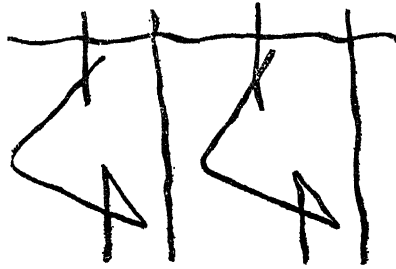
ओंकार शरद

तीन रुपया

१९६३

प्रकाशक	राजरंजना प्रकाशन जीरो रोड, इलाहाबाद-३
मुद्रक	श्री विष्णु आर्ट प्रेस ऋषि कुटी, इलाहाबाद-३

यह उपन्यास

यह उपन्यास सन १९५४ में जब पहली बार छपा तब इसे लेकर काफी हंगामा हुआ और मुझे भी कम झंझट नहीं उठानी पड़ी। मेरे अनेक बुजुर्ग राजनीतिक मित्रों को इस कथानक में उनकी अपनी शक्ल नजर आई और इन तमाम कल्पनिक घटनाओं को सत्य बताकर वे मुझे अपयश का भागी बनाने के चक्कर में खुद हँसी के पात्र बने। मेरा दोष केवल इतना ही है कि मैंने 'दादा' जैसे एक दो नहीं सैकड़ों नेताओं की जिंदगी को खूब नजदीक से देखा है और कुछ असली घटनाएँ छिप कर कथानक में घुस आईं। भला इसका मेरे पास इलाज भी क्या था?

१९५८ में जब इसका नाट्य-रुप इलाहाबाद में प्रदर्शित किया गया तो महीनों सी० आई० डी० ने पीछा किया और यह जानना चाहा कि यह किसकी जीवन गाथा है। और अंत में उन्हें निराश होना पड़ा, पर 'दादा' को प्रसिद्धि अवश्य मिली।

अब 'दादा' फिर छप कर आपके हाथों में है। खुदा जाने अब कौन सा तूफान उठेगा!

ओंकार शरद

हिंदी हितैषी,
परम स्नेही,
श्री पुरुषोत्तम दास टंडन
(राजा भइया)
को सादर

दादा

ः

"छोटू, ओ छोटू ! छोटू, जल्दी चल, समय हो गया।" कहते हुए यदुवंश ने चौकी पर बिखरे और नीचे पड़े कागज पत्रों को संभालते हुए एकाएक पुकारना शुरू किया। आवाज सुन कर बाहर से एकदम भाग कर छोटू आया और कमरे की चौखट पर ही हाँफता हुआ आँखों से प्रश्न करता सा खड़ा हो गया।

यदुवंश को आहट मिल गई थी। उसने सिर उठाया और हाथों से दैनिक पत्र के पन्नों को जुटाता हुआ एक क्षण छोटू को देख कर आदेश के स्वर में बोला, "क्या ऐसे ही चलेगा ? जरा अपने पाँव तो धो डाल और जल्दी तैयार हो जा, जूते भी पहन लेना, जल्दी।"

"अभी आया, दादा।" कह कर छोटू चिड़िया की तरह उड़ गया।

और यदुवंश अभी भी अपना फैला कागज न जुटा पाये थे कि जाने कहाँ के पाँवों की धूल धोकर हवा के तेज झोंके की तरह छोटू फिर आ उपस्थित हो गया। दादा को उसने व्यस्त देखा तो लपक कर, दिन में भी अँधेरे रहने वाले उस कमरे के एक कोने में पड़ी दादा की गंदी कमीज से पाँव का पानी रगड़ कर सुखा लिया।

तब तक दादा अपना कागज समेट चुके थे। वे उठे और अपनी कमीज के खुले बटन को बंद करते हुए बोले, "छोटू, क्या सचमुच तुझे कभी अच्छे ढंग न आवेंगे? देख तो, तूने कमीज को पहनने लायक नहीं छोड़ा।"

"दादा, यह गंदी तो थी, इसलिए पोंछ लिया।" छोटू ने कह दिया, मानो उसे अपराध का ज्ञान था पर प्रत्यक्ष रूप में वह उसे स्वीकार नहीं करना चाहता था।

"गंदी क्यों थी? खूँटी पर से गिर पड़ी थी, परन्तु अभी दो दिन पहनने लायक तो थी?"

छोटू अपने दादा के इन व्यथा-पूर्ण शब्दों पर केवल मुँह बिचका कर रह गया। आगे बढ़ कर वह किवाड़ की आड़ में पड़े अपने किर-मिच के दवे हुए जूतों को पटक-पटक कर पहनने लगा।

उठ कर दादा बाहर आये और पुकार कर कहा, "छोटू खिड़की बंद कर दे, मैं अभी आया। देख आऊँ, तेरी भाभी का बुखार कैसा है। यदि डाक्टर के यहाँ जाना पड़ा तो उधर से ही होता आऊँगा।"

ग्यारह

इतना कह कर दादा बिना जूता पहने ही बरामदे से हो कर बाहर आए और दाहिनी ओर जा कर उसी मकान के पीछे के दरवाजे से भीतर चले गये।

ऐसा नहीं कि इसी वक्त यदुवंश ने जूते न पहने हों, परन्तु वह अधिकतर यों ही नंगे पाँव रहने का आदी हो गया है। जीवन की विषम परिस्थितियों ने यदुवंश को ऐसा ही बना दिया है जैसा वह कभी नहीं रहा। जिसने भी यदुवंश को कालेज के विद्यार्थी के रूप में देखा है, वह उसका यह स्वरूप देख कर उसी तरह शंका में पड़ जायगा जैसे कोई राजा को एक दिन भिखारी के रूप में देख कर सशंकित हो उठता है। यदुवंश के आज तक के पूरे जीवन को देखने के लिए एक लम्बा और कटु इतिहास देखना पड़ेगा। परन्तु आज का यह जो यदुवंश का स्वरूप है उसी की यहाँ चर्चा है।

जीवन में बहुत अधिक महत्वाकांक्षी होने पर भी जब यदुवंश कहीं कामयाब नहीं हुआ, तो उसने सेवा-कार्य का भार उठा लिया। स्थानीय कांग्रेस कमेटी का वह मन्त्री है। किसी विशेष योग्यता के कारण नहीं, पर अपनी ईमानदारी और परिश्रम के कारण। उसका खर्च कैसे चलता है सो किसी को नहीं मालूम, शायद यदुवंश को भी नहीं मालूम। बाहर के कमरे में कांग्रेस आफिस है और भीतर एक छोटे से आँगन, एक दालान व एक अँधेरे कमरे में उसने अपनी गृहस्थी बसा रक्खी है। परिवार में अकेली उसकी पत्नी है जो इधर पूरे एक साल से लगातार बीमार रहती है। और अब तो महीने भर से वह खाट से लग गई है। उसे क्या रोग है सो शायद सभी डाक्टरों

ने, जिस-जिस ने भी उसे देखा है, पहचान लिया है, परन्तु किसी ने सच्चा रोग यदुवंश से नहीं बताया।

यदुवंश केवल यही समझता है कि बुखार बिगड़ गया है। आज भी सुबह से बुखार तेज है और इसीलिए हाल पूछने वह भीतर गया है कि वापसी में डाक्टर के यहाँ भी होता आवेगा।

इस वक्त उसे छोटू को भरती कराने स्कूल ले जाना है। छोटू उसका छोटा सगा भाई है। उसके पिता तो जब छोटू हुआ था, उसी महीने मर गये थे और डेढ़ साल बाद माँ भी पति के ही रास्ते चली गई थी। परन्तु मरते समय बड़े करुणामय शब्दों में यह कह गई थी कि छोटू के लिए यदु ही माँ और बाप दोनों है।

माँ के इन्हीं शब्दों के कारण वह छोटू को अपने दिल का टुकड़ा बनाये हुये है, वर्ना छोटू जैसे धूर्त और खिलाड़ी लड़के की शरारत को अपनी माँ के सिवा अन्य कोई नहीं सह सकता। कल की ही तो बात है। उसकी एक छोटी सी शरारत ने ही गाँव के इस शान्त जीवन में थोड़ी देर के लिए अच्छा-खासा तूफान खड़ा कर दिया था। कल शाम ठाकुरद्वारे के मैदान से वह खेल कर अपने साथी-संगियों के साथ वापस आ रहा था। तब वह अपने दल के साथ था। उसी समय करामत मियाँ, जो गाँव का एक गरीब किसान है, रोता-कलपता थाने की ओर दौड़ा जा रहा था। थाने के आगे ही कानीं-हौद है और वह उसी तरफ जा रहा था। बात समझते छोटू को देर न लगी। जबरदस्ती करामत को रोक कर उसने यह जान लिया कि गाँव का सब से धनी बनिया देवी साहु करामत के बेगार न करने पर झूठ शोर मचा कर उसके बैलों को अपनी फुलवाड़ी में घुस आने के

झूठे आरोप में कानीहौद ले जा रहा है। अभी कानीहौद वह पहुंचा न होगा। इसीलिए करामत भी दौड़ा जा रहा था कि साहु जी से हाथ जोड़ कर, पाँव छू कर माफी माँग लेगा। छोटू ने यह सुन कर अपने तीन साथियों से कुछ फुसफुसा कर कहा और खुद तीन-चार लड़कों के साथ करामत की मदद के लिए दौड़ पड़ा। जिनसे उसने बातें की थी वे तीनों लड़के किसी धूर्तता के कार्यक्रम के लिए देवी साहु की फुलवाड़ी की ओर चले गये। छोटू में अपने बड़े भाई की तरह हर एक की मदद करने की अभी से बड़ी प्रबल भावना भर गई है इसीलिए विना सोचे-समझे वह करामत के साथ चल पड़ा था। उसके चार साथी और भी तो थे जो अधिक मामला न समझे थे पर छोटू के नेतृत्व में आँख मूँदे दौड़े चले जा रहे थे।

थोड़ी दूर जाने पर करामत ने देखा कि देवी साहु उसके बैलों को हँकाते चले जा रहे हैं। पास पहुंच कर करामत ने साहु जी को रोका और कहा कि क्यों झूठ अपराध लगा कर मुझ गरीब की हत्या करना चाहते हो। पर सुनने की कौन कहे, देवी साहु तो रुके भी नहीं। फिर करामत ने आगे बढ़ कर बैलों की रास पकड़ ली तब साहु ने कहा, "तेरे इन्हीं बैलों ने हमारी फुलवाड़ी उजाड़ डाली है। मैं किसी हालत में भी नहीं मानूँगा और अगर तुमने रास्ते में हमें रोका या जानवर छीनने की कोशिश की तो थाने जा कर रिपोर्ट लिखा दूँगा।"

करामत सहम गया। इस बनिए के लिए कुछ भी असंभव न था। जब गलत अपराध लगा कर सड़क पर खड़े बैलों को फुलवाड़ी के भीतर से पकड़ने की बात कह कर कानीहौद ले जा रहा है तो वह

थाने पर जा कर यह भी कह सकता है कि करामत ने रास्ते में रोक-कर मारपीट की है। परन्तु करामत भी क्या करता, यदि बैल• कानी-हौद चले गये तो मुफ्त ही बीस आने लग जाएँगे और खुशामद में मुन्शी जी को कम से कम अठन्नी जरूर देनी पड़ेगी।

इसीलिए करामत ने शीघ्र ही झुक कर साहु जी के पाँव पकड़ लिये और गिड़गिड़ा कर कहा, "इस बार साहु जी माफ कर दो। अब तुम जो भी कहोगे, हम करेंगे। इस तरह हमें मत सताओ।"

पर साहु तो कुछ झुकने को तैयार ही न था, उसने फिर करामत को झिड़क दिया। तब तक अपने चारों साथियों के साथ छोटू आ गया और दूर खड़ा हो कर बोला, "साहु जी, गाँव में किसी ने नहीं देखा कि बैल फुलवाड़ी में गये थे। सड़क पर से तो पकड़ कर लाये हो।"

"तू चुप रह। तू कौन है बीच में बोलने वाला ?" गरज पड़े साहु जी।

"यह तो मैं तब बताऊँगा जब तुम करामत मियाँ को बैल फौरन वापस न दोगे।" छोटू ने सिर हिला कर कहा।

"मैं दूँ या नहीं, तू क्या बतायेगा ?" साहु ने फिर कहा।

"अच्छा देखो" कह कर छोटू ने चारों ओर देखा। फिर चिल्ला उठा, "गनेस, बिस्सू, छकौड़ी, मोती तैयार हो जाओ।" और उसके चारों साथी सड़क के दोनों तरफ की झाड़ियों से बोल उठे, "तैयार हूँ।"

सहम कर साहु ने पहले तो छोटू को देखा, फिर करामत को, फिर दोनों ओर की झाड़ियों को। उसने क्रोध में कहा, "कल के छोकड़े गुंडेबाजी करते हैं।"

फौरन ही उत्तर में छोटू ने पुकारा, "गनेस चलाओ।"

और एक साथ चार ढेले साहु जी की अगल-बगल से सरं-सरं गुजर गये।

"अगर मुझे चोट लगी तो सब को ठीक कर दूँगा।" साहु ने कहा।

इस बार छोटू को कहने की दरकार न पड़ी और मिट्टी का एक ढेला आ कर फौरन ही साहु के कंधे के नीचे पीठ पर लगा।

"मैं अभी जा कर थाने में रपट लिखाऊँगा।" कहते हुए फौरन साहु ने बैलों की रास छोड़ दी। करामत भी इस घटना के लिए तैयार न था। वह भी डर कर देखता रह गया। बैलों की रस्सी न उठाई। तब छोटू ने पुकार कर कहा, "करामत मियाँ, ले जाओ बैलों को। साहु जी थाने जाते हैं, देखना है किधर से जाते हैं।"

"तो फौजदारी करने पर तुले हैं ये छोकरे! और करामत, लड़कों को बहका कर तू ने अच्छा नहीं किया। ले, आज तो वापस जा रहा हूँ पर एक-एक को ठीक कर दूँगा।" साहु ने कहा और पीठ पर हाथ फेरते हुए थाने न जा कर घर की ओर वापस हुए।

"ठीक पीछे करना, पहले अपनी फुलवाड़ी अब जा कर देखो।" छोटू ने कहा और हँस पड़ा।

करामत ने चुपचाप बैलों को घर की ओर हाँका।

और जब देवी साहु घर आये तो देखते ही सारा गाँव सिर पर उठा लिया।

सचमुच पाँच-छः भैंसें उसकी फुलवाड़ी में घुसी पूरी तरह सभी तरकारियों के पौधों को कुचल रही थीं। यह भैंसे कैसे आईं, किसी को

नहीं मालूम। जब वह गया था तो भैंसे खूंटे पर थीं और फुलवारी का बाँस का फाटक बन्द था। इसमें दो भैंसे तो लाला की खुद्द की थीं, चार उसके पड़ोसियों की।

देवी साहु चीखने लगा। चिल्लाने रोने लगा। सारा गाँव उधर ही लपक कर आ गया और बाहर खड़े हँसते हुए छोटू के दल को देख कर सभी मामला समझ गये पर किसी की हिम्मत न पड़ी कि छोटू या उसके साथियों से कुछ भी कोई कहता।

जान कर बर्र के छत्ते को कौन उसकाता!

गाँववाले तो चुप रहे पर देवी ने शोर कर के अच्छा-खासा हंगामा खड़ा कर दिया और फौरन ही यदुवंश के पास इसकी सूचना भेज दी।

खबर पा कर यदुवंश को समझते देर नहीं लगी कि छोटू का इस उत्पात में कहाँ तक हाथ होगा। उस वक्त तो काम का बहाना करके वह देवी साहु की उजड़ी बगिया की सहानुभूति के लिए न गया परन्तु दूसरे ही क्षण अपनी बीमार पत्नी के सिरहाने बैठ कर काफी सोच-विचार के बाद यही फैसला किया कि छोटू को स्कूल में भरती करा कर किसी प्रकार मास्टर को उस पर खास निगाह रखने की, निगरानी करने की प्रार्थना करना ही इस दुष्ट का इलाज होगा।

परन्तु सवाल उठा फीस का। फीस के लिए कुछ-न-कुछ कम से कम हर महीने ढेढ़ रुपया तो लग ही जाएँगे। खैर, अभी तक जिस तरह कांग्रेस के जलसों के सिवा इस कार्यालय का खर्च और यदुवंश की आर्थिक सहायता का खर्च देवी साहु और शहर के अन्य

सेठ व लाला उठाते रहे हैं उनसे डेढ़-दो रुपये का और प्रबन्ध करा लूँगा ।

तभी पत्नी ने कहा, "लेकिन, भला देवी साहु क्यों मदद करने लगे ! यह दुष्ट तो उनके पीछे हाथ धो कर पड़ गया है । और तुम देख लेना, यह स्कूल में भी ठीक नहीं हो सकता । शरारत उसकी नस-नस में भरी है ।"

लम्बी साँस ले कर यदुवंश ने कहा, "कुछ भी हो, कुछ न कुछ प्रबन्ध हो ही जायगा । आखिर घर से निकाल तो दूँगा नहीं । माँ मरते वक्त यही तो कह गई थी......।"

और आज इसी फैसले के फलस्वरूप छोटू स्कूल जा रहा है और उसी को भरती कराने के लिए यदुवंश भी जा रहे हैं ।

यदुवंश को छोटू की छोटी-छोटी शरारतों में उसका भविष्य साफ़ दिखाई पड़ता है । उसे रोकना होगा, नहीं तो यदि वह क्रान्तिकारी हो जायगा, तब एक ही घर में पानी और आग का साथ-साथ रहना सम्भव न हो सकेगा । और इस आग को बढ़ने के पूर्व ही यदुवंश उसे बुझा देना चाहता है ।

छोटू को स्कूल पहुंचा कर व नाम लिखा कर यदुवंश डाक्टर के यहाँ गया। वहाँ से पत्नी का हाल कह कर दो शीशी दवा प्राप्त की और ला कर पत्नी के सिरहाने आले पर दोनों शीशियाँ रखा ही था कि पत्नी ने कराह कर कहा ?

"इतना दिन चढ़ आया और तुमने अभी तक मुँह में पानी भी नहीं डाला है। आज तो मैं उठ भी नहीं पा रही हूँ। तुम्हीं पहले चूल्हा जला कर खिचड़ी का अदहन चढ़ा दो फिर नहा कर थोड़ी खिचड़ी हमें भी देना और तुम भी खा लेना और छोटू के लिए भी रख छोड़ना। जाओ घड़े से खिचड़ी निकाल लाओ न, मैं बता दूँ कि

कितनी छोड़ोगे। अगर कहीं ज्यादा छोड़ दोगे तो खिचड़ी भी खराब हो जाएगी और बेकार भी जाएगी।"

यदुवंश निरीह सा खड़ा पत्नी की बातें सुन रहा था और निश्चय न कर पाया था कि क्या करे कि तभी बाहर से किसी ने लगातार पुकारना शुरू किया।

"दादा !"

"दादा !!"

खिचड़ी की समस्या वहीं छोड़ कर यदुवंश बाहर आया। देखा कि सुँघनी महतो खड़े हैं। ये सुँघनी महतो गाँव के किसान कार्यकर्ता हैं। तपे-तपाए, परखे हुए। यदुवंश जानते थे कि महतो का आना कभी निरर्थक नहीं होता। काम होता है तभी वे आते हैं। सो उन्हें लिवा कर वे बाहर ही बाहर कांग्रेस के उसी दफ्तर में चले गये जिसमें सुबह छोटू से बातें की थीं। इसे ही यदुवंश की बैठक और कांग्रेस का दफ्तर दोनों कहा जा सकता है। इस दफ्तर में आ कर महतो ने धुँधली हो रही दीवारों पर दृष्टि डाली। सामने की दीवार पर एक अलमारी थी, जिस पर केवल रद्दी अखबार गंजे थे। उसके ऊपर गाँधी जी का एक चित्र टँगा था। जेल की कोठरी में गाँधी जी बैठे थे और सामने चर्खा रखा था। एक चित्र बहुत धुँधला सा दूसरी ओर टँगा था। यह चित्र किसी कैलेन्डर ने काट कर फ्रेम कर लिया गया है। इसमें भारतमाता हाथ में झन्डा लिए खड़ी हैं। उनके पाँवों में बेड़ियाँ हैं और हाथों में भी जंजीरें। इसी माँ को, इन्हीं बन्धनों से छुड़ाने का व्रत तो यदुवंश ने भी ले रखा है।

बीस

महतो ने चारों ओर शून्य दृष्टि से देख कर फिर अपनी आँखें यदुवंश पर गड़ा दीं। यदुवंश अब तक अपनी चौकी के निकट बैठ चुके थे। महतो ने पूछा,

"कहो दादा !"

"ठीक ही है महतो जी ?" दादा ने लम्बी साँस छोड़ कर कहा। 'दादा' शब्द एक तरह से यदुवंश का नाम ही हो गया है। गाँव के सभी लोग तथा सभी परिचित इन्हें बड़े स्नेह व आदर से दादा ही कहा करते हैं। जिले के एकमात्र त्यागी और देशभक्त का नाम कैसे लिया जाय ! चाहे उम्र में वह कितनों से ही छोटा क्यों न हो परन्तु उनके कार्यों के प्रति किसे श्रद्धा व स्नेह नहीं है ? इसी से लोग इन्हें दादा ही कहते हैं। महतो भी तो उम्र में इनसे काफी बड़े हैं, परन्तु ये भी दादा ही कह कर स्नेह व आदर से इन्हें पुकारते हैं।

"दादा, घर में अब क्या हाल है ?" बड़ी आत्मीयता से महतो ने पूछा।

"महतो, हाल क्या बताऊँ ? एक महीने से खाट पकड़ ली है। हर वक्त खाँसी आती है। कमजोरी प्रतिक्षण बढ़ती जाती है। कुछ समझ में नहीं आता कि क्या करूँ ! बुखार भी हर समय बना रहता है। डाक्टर तो कहते हैं कि बुखार बिगड़ा है पर मेरी तो समझ में कुछ दूसरा ही आता है। भगवान न करे पर यदि कुछ वैसा ही हुआ तो मैं क्या करूँगा ? कुछ समझ में नहीं आता। महतो जी, कुछ रास्ता बताइये......।" दादा कहे जा रहे थे और महतो जी एकाग्रचित्त हो कर उन्हें सुन रहे थे। दादा के ये शब्द उनके अन्तर की करुणतम गहराई से आ रहे थे। कहते-कहते उनकी आवाज भर्रा गई और आँखें भी तरल हो उठीं।

"महतो जी ! बताइए, कोई रास्ता बताइए। देवी साहु तो छोटुआ को ले कर आजकल नाराज हैं—उन्होंने पहले तो कुछ मदद करने को कहा था परन्तु वे अकेले कब तक साथ देंगे। और लाला महाजनों से जो कुछ प्राप्त होता है उससे कार्यालय का ही कार्य नहीं चलता। मैं अपने लिए भला क्या कर सकता हूँ ?"

महतो को सचमुच बहुत दया आई। उन्होंने आँसू पोंछने के ढंग पर कहा, "दादा, इस प्रकार दुखी होने और हिम्मत हारने से भला कैसे काम चलेगा। देवी साहु को तो मैं समझाऊँगा। छोटू अभी बच्चा है। और बच्चे की बात पर उन्हें ख्याल नहीं करना चाहिए। और अधिक के लिए भी मैं और लोगों से कुछ-न-कुछ जुटाऊँगा। लेकिन अभी इतना अधिक परेशान होने की बात भी नहीं है। खाँसी तो आती ही है—हो सकता है कि डाक्टर का कहना ही ठीक हो कि सिर्फ बिगड़ा बुखार हो।"

महतो कह तो गये लेकिन उनके मन में भी कोई दादा की ही तरह कह रहा था—बिगड़ा बुखार नहीं है, तपेदिक का बढ़ा हुआ रूप है।

इस वार्तालाप के बाद महतो और यदुवंश दोनों ही काफी देर तक चुप बैठे बीमारी की ही बातें सोचते रहे। फिर अचानक यदुवंश को जैसे स्थिति का ज्ञान हुआ या कुछ याद आया सो उन्होंने पूछा, "लेकिन महतो जी, इस समय कैसे आना हुआ ? कोई खास बात ?"

"हाँ वही, ऊँचडीह गाँव वाले मामले के लिए यदि डिप्टी कमिश्नर से मिल लिया जाय तो कैसा है ?"

"तो वहाँ कल के बाद भी कोई घटना हुई क्या ?" दादा ने पूछा।

"हाँ कल फिर जमींदार ठाकुर ने किसानों को खेत नहीं जोतने दिया और सुना है कि मारपीट भी की है।"

"तो ठाकुर अपनी कार्यवाइयों से बाज नहीं आ रहा है !" सिर हिलाते हुए दादा बोले, "अच्छी बात है, चलो डिप्टी कमिश्नर से ही मिल आया जाय। अभी तो समय है और भेंट भी हो जायगी।"

इतना कहते-कहते यदुवंश उठ खड़े हुए और फिर भीतर चले गए। जैसे सचमुच चलने की ही तैयारी में हों। महतो यदुवंश की ओर देखते रहे जब तक वे भीतर नहीं चले गये। महतो मन ही मन सोच रहे थे—"देश के लिए इस प्रकार पागल हो जाने वाले ऐसे व्यक्ति कम ही मिलेंगे। वह यदुवंश को खुद भी जानता है—बहुत निकट से और बहुत घनिष्टता से जानता है। वह जानता है कि इसी देश-प्रेम के कारण ही तो यदुवंश ने पिछले पाँच वर्ष से जो जीवन बिताया है वह कोई साधू या सन्यासी भी न बितावेगा। जीवन का सारा रस जैसे सूख कर इसी देश-प्रेम की जड़ में समा गया है। दादा ने पाँच वर्ष से जूते नहीं पहने। ऐसा नहीं कि वे पहन न पावें या खरीद न पावें लेकिन वह भारत की करोड़ों नंगी-भूखी जनता के बीच उन्हीं में से एक बन कर रहना चाहते हैं। भारत के गाँवों में लोगों को इतनी सुविधा कहाँ कि वे अच्छे कपड़े और जूते पहन सकें। फिर यदुवंश ही क्यों सज-धज कर रहे और जूते पहने—इसी देश-प्रेम की भावना से उसने बहुत सादा जीवन अपना लिया है। खादी की एक धोती और खादी के ही एक कुरते में वह अपना गुजर किस प्रकार करता है, वही जाने। यही हाल तो उसकी पत्नी का भी है। उसने

भी यदुवंश के साथ अब तक उसी की तरह रह कर बिताया है। कभी उसने न तो साड़ी का रंग पहचाना न सिल्क की मुलायमियत जानी। दिन रात श्रम और सेवा के सिवा कुछ भी न जाना। न तो उसे घर के बाहर की दुनिया का अंदाज है न अनुभव। शादी हुए भी आज छः वर्ष होने को आये। शादी के बाद ही यदुवंश की माँ मर गई थी जिसके कारण गृहस्थी का सारा बोझ उसी के नाजुक कंधों पर आ गया था, जिसे वह अपनी सीमित सुविधाओं के सहारे जितनी अच्छी तरह चला सकती थी चलाती आई है। कहीं से कोई त्रुटि न आये यही सोचते-विचारते वह जीवन बिता रही है। परन्तु अनन्त असुविधाओं के बीच वह ठीक तरह से गृहस्थी चलाए भी तो कैसे! माँ के मरने के बाद ही यदुवंश ने, जो नौकरी वह करता था उसे छोड़ दिया। कारण यह हुआ कि यदुवंश एक दफ्तर में काम करता था। माँ की बीमारी और मृत्यु में सब मिलाकर लगभग बीस दिन यदुवंश काम पर न जा सका और दफ्तर वालों ने उसी महीने बीसों दिनों का वेतन काट लिया। एक तो मुसीबत के समय यदुवंश ने इधर-उधर थोड़ा सा कर्ज कर लिया था, उसे ही भरना था, ऊपर से जब महीने की सीमित आमदनी में भी टोटा पड़ा तो सचमुच उसके अन्तर का विद्रोह भड़क उठा। पहले तो अपने अफसरों के सामने वह काफी गिड़गिड़ाया, बाद में जब कहीं कोई सुनवाई न हुई तो उसने इस्तीफा दे दिया और निश्चय कर लिया कि आजन्म वह नौकरी के चक्कर में न पड़ेगा।

बस तभी से बेकारी के दिनों में यदुवंश का कांग्रेस के कुछ कार्यकर्ताओं से सम्बन्ध हो गया जो बाद में उसे ही पक्का कांग्रेसी बनाने

में सफल हुआ और तब से आज तक यदुवंश कांग्रेस का पक्का सेवक बना हुआ है। पाँच वर्ष हो गये उसे कांग्रेस का दामन पकड़े। इसी बीच वह यदुवंश की 'यदु' वाली स्थिति से उठ कर आज जिले भर के किसानों का 'दादा' हो गया है। इस बीच उसने अपनी सेवाओं के कारण यश तो अवश्य ही कामाया परन्तु घर के प्रति उदासीन होने के कारण गृहस्थी की स्थिति बिलकुल खोखली होती गई। किस प्रकार यदु की पत्नी दोनों शाम चूल्हा जलाने का सराजाम इकट्ठा कर लेती थी इस ओर कभी यदु ने सतर्क होकर नहीं देखा। और देखता भी क्यों, जब कि वह खुद उस दिशा में कुछ नहीं कर सकता तो उसमें दखल भी क्यों दे। उसकी पत्नी दिन और रात परिश्रम करके, सिलाई, कढ़ाई और बुनाई करके किसी तरह इतना जुटा लेती थी कि यदु का, अपना और छोटू का पेट भरती थी। बाकी खरचों, कपड़ों, दवाइयों के लिए यदुवंश से जो भी बन पड़ता, करता था।

यह सच है कि यदु की पत्नी ने यदु को इस फिक्र से अलग रखा परन्तु यह न तो यदु ही अनुभव कर पाया, न उसकी पत्नी ही कि इस प्रकार के परिश्रम का नतीजा क्या होगा। आखिर पिछले वर्ष जाड़े में एकाएक यदु की पत्नी को सर्दी का बुखार आ गया जो अच्छा हो कर भी बराबर अनेकरूपों में उसे घेरे रहा और अब स्थिति यह आ गई है कि महीने भर से वह खाट से लग गई है। उसके रोग के विषय में भी लोगों की अनेक अलग-अलग धारणाएँ हैं। वह इतनी कमजोर हो गई है कि अब तो चार वाक्य बोलने में भी उसे खाँसी और सुस्ती आ जाती है। वह किस ओर बढ़ती जा रही है नहीं कहा जा सकता। यद्यपि कभी-कभी तो यदु की पत्नी

को ऐसा अवश्य लगता है कि जैसे उसके जीवन की अवधि अधिक नहीं है, परन्तु यदु है कि वह कभी भी इस प्रकार की निराशावादी बातें नहीं सोचता। वह सदा से ही केवल वर्तमान के लिए ही सतर्क रहने वाला व्यक्ति रहा है। भविष्य जैसा रूप ले कर आवेगा उससे वैसा ही निर्वाह कर लिया जायगा। इसलिये आँखों से देख कर भी वह पत्नी के स्वास्थ्य और भविष्य के लिए उतना चिंतित नहीं है जितना होना चाहिए।

लगभग पाँच-सात मिनट के वाद यदुवंश वापस आया। उसे देखते ही महतो उठ खड़े हुए। यदुवंश ने दरवाजे बन्द किए और दोनों ही डिप्टी कमिश्नर के बँगले पर जाने वाली सड़क पर चलने लगे। काफी दूर तक दोनों ही खामोश रहे। अन्त में महतो ने ही खामोशी तोड़ी।

"सुना है दादा कि यह डिप्टी कमिश्नर जाने वाला है।"

"हाँ, मैंने भी सुना है। कोई बंगाली डिप्टी कमिश्नर आने वाले हैं।"

"देखें, वह कैसा आदमी है।"

"यह तो बड़ा ही सज्जन है। ऐसा भला तो निश्चित ही वह नहीं हो सकता। लेकिन अपने को क्या—किसी की अच्छाई-बुराई से अधिक क्या मतलब ? हमारा काम हीं ऐसा है कि थोड़ा बुरा हो तो भी काम चलता रहेगा। और नहीं तो जैसा होगा—जैसी पड़ेगी देखी जायेगी।"

आखिर आज डाक्टर ने कह ही दिया जिसकी इतने दिनों से यदुवंश को आशंका थी। दोपहर को डाक्टर ने कहा था, "यदु बाबू, मैं देखता हूँ कि आप से साफ़-साफ बताना ही पड़ेगा। अभी तक तो मैं इस कोशिश में था कि सम्हाल लूँ नहीं तो कहीं आप पर इसका अधिक प्रभाव न पड़े, पर अब तो मैं अपने को विवश पाता हूँ। आप की पत्नी का एक फेफड़ा बिल्कुल ही बेकार हो गया है और दूसरे पर भी काफी असर हो चुका है। टी० बी० का बढ़ा हुआ रूप है। आप इन्हें कहीं पहाड़ ले जाने का प्रबन्ध कीजिए।

आप का यह मकान भी ठीक नहीं है, ऐसे रोगी के रहने लायक। यहाँ तो ठीक हो ही नहीं सकता। क्योंकि गरमी के दिन आ रहे हैं, तब कुछ भी न किया जा सकेगा। यहाँ की गरमी तो इस प्रकार के रोगी के लिए बहुत ही कठिन होती है। अभी फ़िलहाल मैं दो इंजेक्शन रोज लगाऊँगा। आप को सिर्फ इंजेक्शन के दाम का इंतजाम करना है, यही छः रुपया रोज और खाने के लिए फलों का रस, जरूर-जरूर, समझे !"

इतना कह कर डाक्टर तो चला गया लेकिन यदुवंश के सामने धरती घूम गई। यह कौन सा पहाड़ आ टूटा ! अब क्या होगा ! क्या जीवन की कोई भी शान्ति सुरक्षित न रहेगी। पत्नी को इस तरह आसानी से वह कदापि नहीं मरने देगा। लेकिन करेगा भी क्या ? छः रुपया रोज की सुइयाँ, डाक्टर कृपा करके कुछ न लेगा और कम से कम दो रुपये का फल। यानी आठ रुपये रोज—महीने भर में लगभग ढ़ाई सौ रुपये ! ओफ्, इतना कहाँ से आएगा ? और पहाड़ ले जाने की तो वह कल्पना भी नहीं कर सकता। वहाँ का पूरा खर्च और फिर देख-भाल करने के लिए भला कौन रहेगा। वह तो किसी कदर भी नहीं जा सकता। यहाँ का भी कितना नुक-सान होगा।

डाक्टर के जाने के बाद घंटों तो यदुवंश अपने दफ्तर में बैठे सोचते रहे। फिर उठ कर उदास मन पत्नी के पास गये। पत्नी के सम्मुख डाक्टर ने अवश्य ही कुछ नहीं कहा था लेकिन वह सब कुछ समझ गई थी। रोगी को ही भला अपने रोग का ठीक अंदाज न होगा !

यदुवंश को देख कर पत्नी उसके अन्तर की व्यथा को समझ गई, बोली,

"तुम इस प्रकार दुःखी क्यों होते हो ?"

यदुवंश के डूबते हुए दिल को सहारा मिला। वह आकर पत्नी की चारपाई पर बैठ गया और गीली आँखों से पत्नी के सूख गए शरीर को देखने लगा। पत्नी ने बड़ी कठिनाई से यदुवंश की ओर रुख करने को उसी की ओर करवट ली। उसका बीमार शरीर यदुवंश के शरीर से छू गया। यदुवंश को एक नए प्रकार का रोमांच हो गया। यह अजीब अनुभव था। मन में आया कि झपट कर वह पत्नी को अपनी सोने से लगा ले लेकिन बीमार शरीर कहीं टूट न जाए। वह थम गया। केवल अपना हाथ उसके कूल्हे पर रख दिया और बहुत संयत होते हुए कहा,

"तुम्हारी बीमारी काफी बढ़ गई है।"

"सो तो मैं जानती हूँ। लेकिन तुम्हारे इस प्रकार दुःखी और चिन्तित होने से क्या होगा !" कराह के बीच पत्नी इतना ही बोली।

यदुवंश ने अनुभव किया कि उसे बोलने में भी कष्ट हो रहा है। सो खुद चुप होकर ही उसे भी चुप करा सकता है, यही इलाज है, यह वह जानता था सो चुप होने के लिए केवल इतना कहा, "चाहे कुछ न हो पर मैं तुम्हें यों ही मरने कैसे दूँगा ! सोचता हूँ कि आज सिविल सार्जन को बुलाकर दिखा दूँ। वह तो अपने डाक्टर से अधिक होशियार है ही !"

"किसी भी डाक्टर को बुलाने से क्या होगा ? मैं अधिक दिन जिऊँगी नहीं।" कहते-कहते पत्नी का गला भर आया और वह अपने

को बहुत सम्हालती रही लेकिन आँखों से आँसू की दो बूँदें बरबस निकल ही पड़ीं जिनमें से एक तो नाक के पास आकर रुक गई और दूसरी गालों पर होकर, तकिये पर सूख गई। यदुवंश का जी तो पहले से ही भरा था—पत्नी की हालत देखकर चाहा कि वह पूरी शक्ति से रो पड़े लेकिन वह पुरुष था—पुरुष घुटना जानता है, रोना नहीं। अपने को उसने बहुत सम्हाला और अपनी धोती की चुन्नट को ऊपर उठाकर नाक के पास थमे हुए पत्नी के आँसू को सुखा दिया। मुँह से कुछ बोला नहीं—कहीं मुँह खोलने पर रुलाई न निकल आवे।

पत्नी को तनिक राहत मिली, उसने आगे कहा, "मेरे लिए और रुपये न बहाओ। जो होना है वह तो होकर ही रहेगा। सिविल सार्जन के लिए और उसके बताए इलाज के लिए रुपये कहाँ से...।" पत्नी का वाक्य पूरा न हो सका और खाँसी का एक तेज हमला हुआ। खाँसी काफी तेज थी। यदुवंश ने तनिक आगे सरक कर उसका सिर अपनी जाँघ पर रख कर मुँह अपने ही पेट में दाब लिया।

थोड़ी देर में खाँसी तो रुक गई लेकिन उसकी साँस बहुत ही तेज चल रही थी। उसे तकिए पर पुनः ठीक से लिटा दिया। वह बहुत कमजोरी का अनुभव कर रही थी। इससे आँखें मूँद कर पड़ी रही।

यदुवंश को पत्नी की यह हालत देख कर जैसे स्थिति का अधिक ज्ञान हुआ। इधर बहुत दिनों से और विशेषकर जबसे वह बीमार पड़ी थी, यदुवंश को उसको इतने निकट से देखने का मौका नहीं आया था। दुनिया के प्रत्येक काम में वह घर को बिल्कुल भूला

रहता है। उसने गहरी दृष्टि से आँख मूँद कर हाँफती हुई पड़ी पत्नी के शरीर का निरीक्षण करना शुरू किया। यह क्या से क्या हो गया ! उसका शरीर गल कर नाममात्र को ही रह गया है, यह सब कैसे हो गया। इस समय उसकी पत्नी का शरीर इतना दुबला हो गया था कि यदि उसका चेहरा ढाँक दिया जाय तो यह पता लगाना कठिन होगा कि वह स्त्री का शरीर है या किसी पुरुष का।

गल कर रह गये इसी शरीर को यदुवंश बड़ी करुणा और चिन्ता की दृष्टि से देख रहा था। काश कि वह पहले से तनिक फिक्र करता तो पत्नी की यह दुर्दशा न हो पाती। डाक्टर का कहना कि टी० बी० का अन्तिम रूप है—अब उसे अक्षरशः सत्य लगा। मन ही मन यदुवंश अपने को धिक्कार रहा था। ऐसी अच्छी पत्नी की उसने हत्या कर दी, अपनी ही लापरवाही और मूर्खता से। इस बेचारी को जीवन भर उसने कष्टों से रखा, पथरीली सड़कों पर चलाया है—आराम का पथ बेचारी जानती भी नहीं। उसके साथ यह जो अप्रत्यशित रूप से अन्याय हो गया है उसके लिए यदुवंश मन ही मन अपने को कोस रहा था।

तभी पत्नी को फिर खाँसी आ गयी। यह खाँसी पहले से भी अधिक भयानक थी। खाँसते-खाँसते वह आधा उठ बैठी। यदुवंश ने झट तकिया उसके कमर के पास लगाया लेकिन इस पर भी खाँसी कम न हुई। यदुवंश उसके सिरहाने बैठ कर उसकी पीठ सहला रहा था। इस समय की खाँसी देख कर तो उसका भी जी डूबने लगा। कि अचानक पत्नी पाटी की ओर झुक आई और उसे उबकाई आ

गई। दूसरे ही क्षण यदुवंश की आँखें निकल आईं—यह क्या ! खून के कतरे !

उस समय पत्नी के मुँह से खाँसी के साथ-साथ काफी अधिक मात्रा में खून निकल गया। जब खाँसी बन्द हुई तो वह इतनी कमजोर हो गई थी कि न तो देख सकती थी, न बोल सकती थी। बेजान की तरह वह खामोश पड़ी रही। हाँ, उसके सीने की धौंकनी की तरह चलना बड़ी आसानी से देखा जा सकता था।

यदुवंश के मन में इस समय पहली बार ऐसा हो रहा था कि वह क्या करे कि पत्नी अच्छी हो जाये ! क्या अपना शरीर दे कर भी वह उसे बचा सकता है ! पास में पैसे तो नहीं कि बड़ा इलाज कर सके लेकिन यों भी तो नहीं देखा जाता। यह दशा है तो दो चार-छः दिन भी बेचारी शायद ही चल पावे।

इसी समय छोटू बाहर से आ गया। आँगन में पाँव रखते ही उसकी दृष्टि बरामदे में बीमार भाभी की खाट की ओर गई। खाट के नीचे पड़ी खून की कै को देख कर ही वह वहाँ की स्थिति को बहुत कुछ समझ गया। चुपचाप वह भी जाकर भाभी के सिरहाने खड़ा हो गया। यदुवंश ने ज्यों ही छोटू को देखा कि कहा, "छोटू, जरा दौड़ कर चला तो जा और देख आ देवी साहु अपनी दूकान पर हैं। और अगर वे न हों तो जरा बाजार जाकर देखना कि क्या अपनी कपड़े की दूकान पर मोती सेठ हैं ?"

छोटू फौरन ही आज्ञापालन के लिए दौड़ गया। यदुवंश के आदेश को उसकी पत्नी ने भी सुना और बहुत कष्ट से उसने आँखें खोल कर केवल इतना कहा,

"इन्हें क्यों दिखवाया है ?"

"जरा काम है।"

"क्या काम ? रुपये तो नहीं मँगवा रहे ?"

"सोचता तो हूँ—कि एक बार सिविल सार्जन को जरूर दिखाऊँ ?"

पत्नी को बोलने में कष्ट ही हो रहा था। उसने कहा, "देखो यह सब बेकार है। मैं अब बचूँगी नहीं। और हाँ......वह लोग पैसे देंगे भी......वे छोटू से नाराज हैं। और अगर इतना ही जरूरी है या तुम्हारा जी न माने तो जरा मेरी सन्दूक खोल कर देखो शायद चाँदी के कुछ गहने बचे हैं। सोने......सोने वाले तो पहले ही बिक गए......उन्हीं से काम चला लो......।"

कहते-कहते उसकी आवाज बिल्कुल क्षीण पड़ गई।

यदुवंश मन ही मन रो रहा था—प्रत्यक्ष में भला क्या कहे। अपनी ही करनी से पत्नी के मौत के मुँह में लोप होते देख रहा है। वह क्या करे कुछ समझ में नहीं आता।

गहने एक-एक करके वह सभी बेच चुका है। लेकिन जब-जब गहनों के बेचने का प्रश्न उसके सामने आया है उसे घोर पीड़ा हुई है। जीवन भर कभी एक छल्ला भी नहीं बनवा पाया और बेचने के लिए विवश होकर उसे बेचना ही पड़ा है। पत्नी ठीक ही कहती है कि सोने के गहने तो अब रहे नहीं केवल चाँदी वाले बचे हैं सो उन्हें वह क्यों बेचे ! उन्हें गाढ़े समय के लिए क्यों न रखे। लेकिन यदुवंश को कौन समझाए कि इससे अधिक गाढ़ा वक्त और क्या आएगा जबकि उसके पास पत्नी की दवा के पैसे भी नहीं हैं। फिर

जब पत्नी की बीमारी उसके जान को लग गई है। उसकी विवशता भी कितनी अजीब है ! जीवन भर ऐसे गाढ़े समय आते रहे हैं और वह एक-एक करके सब गहने बेच चुका है और अब चाँदी के कुछ टुकड़े बचे हैं उन्हें ही बेचने में उसे इतनी झिझक आज क्यों हो रही है ? इन्हें भी बेच कर वह क्यों नहीं गहनों का घर से नाम निशान ही मिटा देता !

यदुवंश चुपचाप उठा। उसके हृदय में वेदना थी और आँखों में आँसू। पर परिस्थितियों की विवशताएँ भी काफी ताकतवर थीं। इन नाममात्र के चाँदी के गहनों को बेच कर ही पत्नी को सिविल सार्जन को दिखा दे—यही एक रास्ता बचा नजर आता था।

वह कमरे में गया और पत्नी की सन्दूक उसने खोली। दो-एक फटी धोतियाँ थीं और टीन के एक डिब्बे में थोड़े से चाँदी के गहने ! गहनों को खरीददार की नजर से भी देखा तो लगा कि मुश्किल से तीस या पैंतीस रुपये मिल सकते हैं। इससे अधिक नहीं।

उसकी हिम्मत न पड़ी। वह सन्दूक वैसीं ही बन्द करके वापस आ गया। तभी हाँफता हुआ छोटू आ गया और बोला, "दादा, दोनों में कोई नहीं हैं !"

दादा ने सुन लिया और सिर हिला दिया।

पत्नी ने आँखें खोल कर यदुवंश को देखा जैसे वह कह रही हो—

"मैंने तो पहले ही कहा था न !"

भाभी की यह दशा देख कर छोटू बहुत परीशान हो रहा था। वह यों खड़ा रहा जैसे कोई और आज्ञा मिले तो वह शीघ्र ही बजा लावे। भाभी की वह सेवा करे तो जैसे उसे संतोष ही होगा।

चौंतीस

क्षण भर यदुवंश जाने क्या सोचते रहे फिर दो बालटी पानी ला कर पत्नी की खाट के नीचे पड़े खून और खखार को धो डाला। पत्नी बेचारी लाख मना करती रही लेकिन यदुवंश नहीं माना। आज उसे अपनी तमाम गलतियों पर पश्चाताप हो रहा था और इसीलिए आज उसे अपना कर्तव्य याद आ गया है और आगे वह बिलकुल सतर्क रहेगा।

वहाँ की सफाई करके उसने हाथ साफ किया और अपनी धोती में ही हाथों को पोंछते हुए उसने कहा, "छोटू, तुम जरा यहीं रहना। मैं आता हूँ।"

पत्नी ने भी सुना। उसने रोकना चाहा पर वह बोल न सकी। छोटू ने दादा की बात पर सिर हिला दिया और भाभी के और पास सिरहाने सरक आया।

यदुवंश बाहर चला गया। कहाँ गया, क्यों गया, सो दोनों में किसी को नहीं मालूम।

थोड़ी देर सन्नाटा छाया रहा। यदुवंश की पत्नी में बोलने की शक्ति ही नहीं थी और छोटू भला क्या बोलता।

अब यों ही काफी देर हो गई। बेजान की तरह यदु की पत्नी पड़ी थी और सिरहाने मूर्ति की तरह छोटू खड़ा था। यदु की पत्नी बीमारी से बेहोश सी थी और छोटू भाभी को देख कर हतप्रभ!

तभी हल्के से आँखें खोल कर क्षीण स्वर में छोटू से भाभी ने पूछा, "क्या तुम्हारे दादा अभी नहीं आये।"

"नहीं भाभी! मैं हूँ। बोलो कुछ काम है? दादा को गये थोड़ी ही देर हुई है शायद कहीं जरूरी काम से गये होंगे।"

पैंतीस

"हाँ, उनके पास जरूरी कामों की कमी नहीं है..." रुक-रुक कर भाभी ने उत्तर दिया फिर बोली "सुनो जरा मेरे सिर पर हाथ तो रखो, बहुत दर्द हो रहा है।"

छोटू को जैसे सेवा का अवसर मिल गया जिसके लिए वह बहुत देर से चिन्तित था। लपक कर वह भाभी के सामने आ गया और अपनी नन्हीं सी हथेली भाभी के जलते हुए माथे पर रख दिया। भाभी को राहत मिली तो उसकी आँखें जरा अधिक खुलीं। अपना कमजोर हाथ उठा कर उसने अपने माथे पर रखी छोटू की हथेली पर रख दिया।

छोटू गौर से भाभी को निहार रहा था। अब उस छोटे से लड़के के दिल में एक अजीब भावना उठ रही थी। वह सोच रहा था। यह अच्छी खासी मेरी भाभी एकदम स बेजान सी हो गई है। लगता है इसी को धीरे-धीरे मरना कहते हैं। और यह सोचते ही उसे एक विस्मृत घटना याद हो आई—क्या मेरी माँ भी इसी तरह बीमार होकर मर गई थी—तब मैं छोटा सा था, ऐसा सुना है। तो क्या मेरी भाभी भी माँ की तरह ही मर जाएगी जो फिर कभी दिखाई न पड़ेगी ? अगर माँ की ही तरह भाभी भी चली गई तब ?

यह सब सोचते-सोचते छोटू का छोटा सा हृदय बिल्कुल भर आया और वह अपने को न रोक सका तो फूट पड़ा और उसके मुँह से एक चीख निकली, "भाभी !"

भाभी ने हाथ बढ़ाकर उसे अपनी ओर खींचा और अपने आप ही छोटू का सिर भाभी की छाती पर आकर बिलखने लगा।

"रोता क्यों है, पागल ?"

"भाभी, तुझे क्या हो रहा है ?" चीखकर छोटू ने पूछा ।

"कुछ नहीं बेटे, तू पहले चुप हो जा,...बहादुर लड़के रोते नहीं न !" भाभी ने पुचकारा ।

भाभी की सांत्वना से छोटू को और रुलाई आई पर थोड़ी देर में रुदन का वेग थम गया और केवल सिसकियाँ ही रह गईं ।

भाभी ने छोटू का सिर सहलाते हुए रुक-रुक कर कहना शुरू किया, "छोटू......देख मैं मर जाऊँ तो अपने दादा को बहुत आराम देना, उन्हें तंग नहीं करना, अच्छा ! और उनका कहना मानना । मैं आकाश से सब देखती रहूँगी । अगर तू दादा को सताएगा तो मैं नाराज होऊँगी नहीं तो जब भी तू मुझे याद करेगा तो मैं सपनों में आकर तुझसे मिलूँगी—तुझे प्यार करूँगी—समझे बेटे !"

"भाभी, तुम नहीं मरोगी ।" भाभी के शरीर को दबोच कर छोटू ने कहा, "मैं तुम्हें नहीं मरने दूँगा, भाभी, भाभी......",छोटू फिर बिलखने लगा ।

भाभी ने छाती में उसका सिर दबा लिया और खुद भी रो पड़ी । बड़ी देर वह जिसे रोक रही थी वह रुलाई आ ही गयी । आज कोई भी पास नहीं जिससे लग कर वह रो सके और छोटू ही इस कमी को पूरा कर रहा था—

भाभी को छोटू से और छोटू को भाभी से आन्तरिक सांत्वना मिल रही थी । दो व्यथित हृदय अपनी अव्यक्त व्यथा अपने आप सहला रहे थे ।

चार दिन हुए छोटू की भाभी का देहान्त हो गया। यदुवंश पर मुसीबत आई है, यह जान कर गाँव के तमाम लोगों ने मिल-मिला कर उसकी पत्नी की अंतिम क्रिया का प्रबन्ध कर दिया। इससे अधिक दूसरों से आशा भी क्या की जाय? और यदुवंश की चलती हुई गाड़ी एकदम से ठप्प पड़ गई। यद्यपि इधर महीनों से पत्नी बीमार थी और वह काम नहीं कर पाती थी फिर भी घर का सारा वातावरण उसी से ओतप्रोत रहता था। अब तो घर में ऐसा सन्नाटा, ऐसी उदासी का साम्राज्य हो गया है कि घर के भीतर पाँव रखना भी यदुवंश के लिए सम्भव नहीं। यदुवंश अधिकाँश समय बैठक ही में काट लेता है। अक्सर उसी कमरे में सो भी जाता है। छोटू से तनिक सहायता लेकर पक्का-कच्चा कुछ न कुछ खाने को बना लेता है बस! उसे जैसे पत्नी की मृत्यु ने बिलकुल ही जड़ बना दिया है।

उसके मन का सारा उत्साह, सारी उमंग समाप्त हो गई है और उसे अपने जीवन में चारों ओर दिखाई पड़ता है—पूरी तरह एक घना अंधकार, कालिमा और निराशा। आगे क्या होगा, कैसे होगा सो वह सोच भी नहीं पाता। उसे लगता है जैसे पत्नी की हत्या का जिम्मेदार वह ही है। यदि उसने शुरू से देख-भाल की होती तो इनकी जल्दी वह कदापि न मरती। आज उसकी मनस्थिति बिलकुल एक हत्यारे की सी है जो अनजाने में हत्या कर दे और पछताये।

रह रह कर यदुवंश के सामने अपनी विवशता की तस्वीर नाच उठती है। जब पत्नी बीमार थी तब सिविल सार्जन को दिखाने के लिए भी उसने उसके बचे-खुचे चाँदी के गहने न बेचे लेकिन जब पत्नी मर गई तो उसकी अंतिम क्रिया करने के लिए उसे वे चाँदी की कुछ निशानियाँ बेंच ही देनी पड़ीं। लगता है जैसे इसी दिन के लिए उसने तब उन गहनों को बचा लिया था। शायद वह सिविल सार्जन को दिखा पाता तो पत्नी बच जाती। ऐसा यदुवंश को बार-बार अनुभव हो रहा था। यदुवंश क्या करे! आदमी ऐसा ही होता है। अनहोनी को भी सम्भव मानता है और अपनी थोड़ी सी चूक को सब से बड़ा अपराध मानता है।

यह तो हुआ। पत्नी भी साथ छोड़ कर चली गई और अब केवल छोटू ही घर में उसका एकमात्र साथी रह गया। छोटू की शरारतें भी आजकल कम हो गई हैं। शायद भाभी को आँखों के सामने मरता देख कर उस छोटे से बच्चे का हृदय बहुत प्रभावित और दुःख से भर गया है। वरना ऐसा चंचल बालक इतना खामोश

कभी नहीं हो सकता। छोटू को देख कर दादा के हृदय में बड़ी करुणा उपजी। दादा को लगा कि वह खुद बेकार ही इतना मातम मना रहे हैं। उससे अधिक चोट तो छोटू को होनी चाहिए जिसे इस कच्ची उम्र में भी किसी का वास्तविक प्यार व स्नेह नहीं प्राप्त है। माँ बचपन में ही चली गई। माँ के आँचल की शीतल छाया का तो उसे तनिक भी अनुभव नहीं है—माँ के बाद जिस नारी को उसने माँ समझने की कोशिश की वह भी आज नहीं रही। घर के सुनसान और मनहूस अँधेरे वातावरण में उसे कौन प्यार से पुचकारेगा—कौन थोड़ा भी स्नेह देगा, यही वह सोच रहा था। उसे लगा कि छोटू की अव्यक्त व्यथा को उसे ही समझना और सहलाना चाहिए। खुद यों व्यथित होकर बैठने से क्या होगा ? जीवन में उसे सदा की तरह हिम्मती और बहादुर ही बनाना है।

सोच कर उसे तनिक ताकत का अनुभव हुआ। उसने छोटू को पुकारा।

छोटू शायद भीतर था सो भाग कर आ गया।

"छोटू !"

दादा का गला भरा था।

छोटू बोला नहीं। पास आ कर खड़ा भर हो गया।

दादा ने हाथ बढ़ा कर छोटू को खींच कर अपने पास बैठा लिया। दादा का इतना सामीप्य छोटू को पहले कभी नहीं मिला था। उसे भी अजीब सा लगने लगा। जिस दिन से भाभी मरी थी रह-रहकर उसका दिल जोरों से रोने को हो रहा था। लेकिन उसे

जी भर कर रो लेने का उत्साह ही नहीं मिला था अब तक ! इस वक्त रह-रह कर रुदन का उबाल उसके गले तक आ-आ कर फँस जाता था। छोटू ने जान बूझ कर अपना मुँह दादा की ओर नहीं किया। जाने क्यों उसे मन में ऐसा लग रहा था कि अगर उसकी आँखें दादा की आँखों से मिलेंगी तो शायद वह और दादा दोनों ही रो पड़ेंगे। भाभी जब मरीं तो उसने सोचा था कि अब उसे स्नेह-प्यार देने वाला संसार में कोई नहीं बचा, पर ऐसा नहीं है। अब लगता है कि जब तक दादा है तब तक उसको स्नेह की कमी अनुभव नहीं होगी। तभी दादा ने बहुत भारी आवाज में पूछा,

"कहो छोटू ! तुम्हें भाभी की याद आती है।"

छोटू को जैसे किसी ने झकझोर दिया हो। उसने सिर उठा कर बरबस दादा के चेहरे को निहारा। उसने देखा कि दादा की आँखें भरी हुई हैं। आँसू का समुद्र उमड़ आने को बेचैन है। यह देख कर उसे रुलाई आ ही गई। वह दादा की गोद में लुढ़क कर रोने लगा। दादा ने छोटू का सिर सहलाना शुरू किया और जब खुद भी सहा न गया तो लगे फफक कर रोने। रुदन को भी एक हल्का सहारा अवश्य ही चाहिए। छोटू के रोने से अचानक उसे रुलाई आ गई। अब वह अपने को सम्हाले या छोटू को, यह वह न समझ पाया। लेकिन जब एक बार रुलाई आ जाती है तो जी भर कर रो लेना ही अच्छा है इसीलिए दादा ने जी कड़ा करके फिर पूछा,

"क्यों छोटू, बोलो बेटे, रोता क्यों है ?"

छोटू भला क्या उत्तर दे। वह और रो पड़ा और रुदन के बीच केवल इतना कहा, "दादा, क्या सचमुच भाभी अब न आवेगी ?"

"हाँ अब भाभी कभी न आवेगी। हम सबों से नाराज होकर चली गई हैं, छोटू।"

छोटू रोता ही रहा। दादा की गोद में माथा रगड़ता ही रहा। कुछ कहा नहीं। लेकिन क्षण भर बाद दादा ने खुद कहा,

"हमने उसे बहुत दुःख दिया था छोटू।"

और इसके आगे दोनों भाइयों को गले लगकर रोने के सिवा क्या बचा था!

दोनों भाइयों का इस एकान्त अँधेरे कमरे में यों फूट-फूटकर रोना कोई वज्र-हृदय व्यक्ति भी देखता तो उसका भी जी आज अवश्य रो उठता।

बड़ी देर तक छोटू को अपने कलेजे से लगाए हुए यदुवंश अपने को और छोटू को सांत्वना देता रहा। फिर कहा, "छोटू चलो यह मकान छोड़ दें और किसी दूसरी जगह चलकर रहें। यह घर अच्छा नहीं। यहाँ हमसे बहुत बड़ा पाप हुआ है।"

"हाँ दादा, हमारा भी यहाँ मन नहीं लगता!" छोटू ने कहा।

छोटू के इस उत्तर से यदुवंश को अपना निश्चय और दृढ़ करने में अधिक ताकत मिली। यदुवंश इस घर को, इस शहर को ही छोड़ देगा। यहाँ उसे अपने पाप का हर समय स्मरण होता रहेगा। और इस व्यथा को वह कदापि नहीं सह सकता। इसीलिए उसने इस निश्चय के बाद तय कर लिया कि उसे अब नए सिरे से जिन्दगी शुरू करनी है।

छोटू को उठाकर खुद भी उठते हुए दादा ने कहा, "जाओ मुँह हाथ धो लो, और मेरे लिए भी एक लोटा पानी ला दो।"

दादा ने यह तो कल ही निश्चय कर लिया था कि वह यह मकान ही छोड़ देगा और कहीं और जाकर रहेगा। परन्तु आज की घटना से विवश होकर उसने उससे भी बड़ा फैसला किया और वह यह कि वह शहर ही छोड़ देगा और जाकर किसी गाँव में रहेगा। और कहीं क्यों—महतो जी अनेक बार कह चुके हैं—वह ऊँचडीह ही चला जाएगा। वहाँ छोटा सा आश्रम बनाकर सेवा कार्य शुरू करेगा।

घटना यों थी कि आज महतो के साथ ही उन्हें एस० डी० ओ० के यहाँ जाना पड़ा। यह एस० डी० ओ० अभी नए ही आए हैं, इसी सप्ताह। कभी मिलने का मौका नहीं पड़ा था और यदुवंश जानता न था कि यह कौन सज्जन हैं। पर आज जब वह उनके बंगले पर गये तो उसके सामने एक समस्या उपस्थित हो गई।

हुआ यह कि ज्योंही उस बँगले में वह घुसा कि दूर पर बाग में खड़ी महिला को देख कर उसका जी जाने क्यों बहुत चंचल हो उठा। वह महिला सम्भवतः एस० डी० ओ० साहब की पत्नी होगी तभी तो इतनी तत्परता से माली से काम करा रही हैं। उन्हें यदुवंश ठीक से पहचान तो न सका पर जाने क्यों उन्हें देखकर वह क्षण भर को घबड़ा सा गया। लेकिन यदुवंश ने उनकी ओर से शीघ्र ही दृष्टि हटा ली और महतो जी से बातें करने लगा। उसे भला किसी महिला के प्रति उत्सुकता क्यों जगे! यह गलत है और अपने को उसने काफी सम्हाला।

उस दिन एस० डी० ओ० साहब से भेंट तो नहीं हुई। यदुवंश और महतो दोनों योहीं लौट आए, लेकिन जब वे दोनों ही बंगले के फाटक के बाहर आ रहे थे कि माली दौड़ता हुआ पीछे से आया और यदुवंश को संबोधित करके बोला कि उसे मेमसाहब बुला रही हैं।

यह सुनकर यदुवंश को और उनसे अधिक तो महतो जी को आश्चर्य हुआ कि भला मेम साहब उसे क्यों बुलावेंगी। यदुवंश के चेहरे पर कुछ क्षणों में ही अनेक भाव आए और गए। क्या बात हो सकती है! क्यों मेम साहब ने यों बुलवाया! तो अवश्य ही वही महिला मेम साहब होंगी जो अभी वहाँ बाग में थीं। यदुवंश को तभी ही हल्का-सा शक हुआ था कि वे उसे जानते तो नहीं? लेकिन यह भ्रम ही होगा। इस प्रकार सोचना भी मूर्खता के सिवा कुछ नहीं। लेकिन अब जब माली ने आकर रोका तो उसे आश्चर्य, कुतूहल और साथ ही शंका की भी सीमा न रही। जोरों से उनका जी धड़कने

लगा। चेहरा तमतमा आया। यदुवंश ने निरीह भाव से महतो की ओर देखा। महतो यदुवंश की इस धर्म संकट की स्थिति को समझ रहे थे। उन्होंने फौरन ही कहा, "हां आइए, हां आइए, दादा! मैं चलकर घर पर इंतजार करता हूँ। शायद मेम साहब इस जिले और शहर के बारे में कुछ जानकारी प्राप्त करना चाहती हों, अभी हाल ही इस शहर में आई हैं न। शायद यही कारण हो · जाइए।"

और उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही महतो घर की ओर जाने वाली सड़क की ओर मुड़ गए अब विवश होकर दादा को माली के के साथ पुनः एस० डी० ओ० साहब के बंगले के बरामदे की ओर अग्रसर होना पड़ा।

थोड़ी दूर आगे जाकर माली तो क्यारियों की ओर बढ़ गया और यदुवंश अपने आप ही बरामदे की ओर। लेकिन यह क्या? सामने यह कौन खड़ा है? यह किसकी प्रतिमा है? क्या वह स्वप्न की किसी दुनिया में आ खड़ा हुआ है? और अगर स्वप्न नहीं तो यह आश्चर्य की उच्चतम सीमा है। बरामदे में मेम साहब खड़ी आश्चर्य, स्नेह और कौतुहल के बीच मुस्करा रही थीं। और यदुवंश के सारे शरीर का रक्त जैसे खटखटाने लगा। यह क्या वही है? यही प्रश्न था जो बार-बार उसे जैसे झटक रहा हो।

"आइए यदुवंश जी! मुझे तो मालूम नहीं था कि आप यहीं रहते हैं। वाह-वाह!" यदुवंश के कानों में यह आवाज आई और वह मूर्ति की तरह जड़ बनकर रह गया।

तो क्या यह रेणु है! अपनी पटना वाली रेणु! तो क्या यही एस० डी० ओ० की पत्नी है?

यह तमाम प्रश्न यदुवंश को एक-एक करके परेशान कर रहे थे। लेकिन कितनी देर तक यों ही रहना हो सकता था ! उसे कहना ही पड़ा—

"अरे रेणु, तुम कहाँ ?" इससे ज्यादा वह कह ही न पाया। और कहता भी क्या ? जिसकी उसे सपने में भी आशा न थी वही प्रत्यक्ष देख रहा था। यह रेणु यहाँ कैसे ? आज आठ वर्षों बाद रेणु फिर क्यों दिखाई पड़ गई ! उसके सामने बहुत सी घटनाएँ नाच गईं। लेकिन मस्तिष्क में एक भी टिक न सकीं।

"आइए, आइए न !" रेणु की वही चिरपरिचित आवाज थी। पुनः आमंत्रित कर रही थी। वह आगे बढ़ा। बरामदे में एक कुर्सी पर बैठ गया। सामने ही रेणु भी बैठ गई।

यदुवंश की तो जैसे किसी ने जुबान काट ली हो लेकिन रेणु बालती जा रही थी,

"आपको यहाँ इस प्रकार देखूँगी इसकी आशा नहीं थी।"

यदुवंश को लगा कि यही वाक्य वह भी दुहरा दे लेकिन तब भी वह कुछ न कह पाया। रेणु ने फिर कहा,

"आप क्या पटना से आकर यहीं हैं ?"

"हाँ, तब से यहीं हूँ।" बड़ी कठिनाई से यदुवंश बोल पाया।

"कहाँ रहते हैं यहाँ ?"

"यहाँ, पास ही। काँग्रेस आफिस में।"

"अच्छा तो अब आप भी काँग्रेस में शामिल है ?"

रेणु ने यह तनिक हँस कर कहा। जैसे परिहास करने की कोशिश कर रही हो। यदु ने केवल सिर हिला दिया। इस प्रकार

भाव बनाकर रेणु का यह प्रश्न करना उसे उचित नहीं लगा। ठीक भी है अब तो वह जिले के एस० डी० ओ० की पत्नी है न! और वह एक मामूली सा काँग्रेस का कार्यकर्ता! उसका उसके प्रति यही रुख होना भी चाहिए था।

यदुवंश चाहता था कि रेणु शीघ्र ही कोई अन्य बात शुरू करे। बताये कि उसके ये पिछले वर्ष कैसे बीते और यही उससे भी पूछे। लेकिन उसे अधिक न बोलना पड़े। क्योंकि आज इतने दिनों बाद अचानक ही रेणु को इस रूप में देख कर वह बहुत अव्यवस्थित सा हो गया है। इसीलिए तो उसके सम्मुख जैसे वह अपनी चेतना खो बैठा है।

थोड़ी देर बाद रेणु ने कहा, "वो तो आज दौरे पर चले गए हैं। किसी और समय कल आइएगा न। मैं पहले से ही आपके विषय में कह रखूँगी। वे भी आपसे मिल कर मेरी ही तरह प्रसन्न होंगे! हाँ बताइए न कैसे आए थे, मैं कह दूँगी।"

यदुवंश अभी तक जो समझ रहा था वह ठीक ही होगा। अवश्य ही यह एस० डी० ओ० की पत्नी ही होगी। तभी नाम न लेकर केवल 'वे' ही कह कर बातें करती है। लेकिन यदुवंश आज अपने बारे में उससे भला किस मुँह से, क्या-क्या बताए? बताए जाने वाली बातों की उसके पास कमी नहीं है परन्तु वह कैसे बताए कि पटना में जब रेणु ने उसे देखा था तब और अब के यदुवंश में ज़मीन आसमान का अंतर है। इस अंतर में रेणु का भी बहुत बड़ा हाथ है लेकिन उसकी चर्चा वह नहीं करेगा। रेणु से वह भी कैसे बताए कि वह किस लिए आया था। भला उसे उसके कामों में क्या

दिलचस्पी हो सकती है ! और चाहे जो भी हो लेकिन राजनीति की बातें रेणु से नहीं की जा सकतीं। आखिर यह है तो एक सरकारी अफसर की ही पत्नी न ! उससे राष्ट्रीय कामों में किसी प्रकार की सहानुभूति की आशा वह नहीं करता। दूसरे वह रेणु को खूब जानता है। रेणु ही के कारण तो वह पटना छोड़ कर भागा था और अब यहाँ भी यह आ गई। सो बहुत परेशान होकर भी वह आगे बात न कर पाया। रेणु की बातों का केवल उत्तर देता रहा।

"अच्छा तो मैं कल ही आऊँगा। कोई खास बात नहीं थी। आऊँगा तभी हो जाएगी। और···और अब मैं जाता हूँ।···तुम्हें यहाँ देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। और अच्छा हुआ कि भेंट भी हो गई नहीं तो पता भी क्या लगता !"

"तो रुकिए न अभी, अगर जल्दी न हो तो ! जरा चाय वाय पी कर जाइए न !"

"नहीं, नहीं,···मुझे सचमुच ही जल्दी है।" कह कर यदुवंश उठ खड़ा हुआ और नमस्कार के आदान की प्रतीक्षा न करके फौरन सीढ़ी उतर कर बाहर जाने लगा।

रेणु भी उठ खड़ी हुई और सीढ़ी पर खड़ी वह दूर तक यदुवंश को देखती रही। आज यदुवंश को देख कर उसे भी आश्चर्य में डूब जाना पड़ा। पटना में यदुवंश उसके जीवन में आया और कुछ दिनों बाद उसी प्रकार लुप्त भी हो गया। यहाँ यदुवंश की यह हालत देख कर उसे जाने कैसा लगने लगा। कहाँ वह पटना में रहने वाला कालेज का तेज और उद्योगी विद्यार्थी, कहाँ आज बिना जूता टोपी का यह खद्दरधारी व्यक्ति। कहाँ है उस समय की इसकी शान

शौकत ! पतलून और सिल्क की कमीज ! चमकती हुई साइकिल पर पवनदेव की तरह उड़ने वाला व्यक्ति ! कालेज की सभाओं में फर्राटे के साथ अँग्रेजी में भाषण देकर सभी उपस्थित व्यक्तियों का अपनी ओर ध्यान आकर्षित करने वाला व्यक्ति ! क्या वह और यह दोनों ही एक व्यक्ति हैं ? क्या इनमें अन्तर नहीं ? और अगर यह अन्तर है तो क्या इतना अन्तर सम्भव है ?

उसके सम्मुख पटने के अनेक दृश्य नाच गए जिनसे केवल उसका और यदुवंश का सम्बन्ध है, जिसे केवल वह और यदुवंश ही जानते हैं। रेणु को लग रहा था कि सात आठ वर्षों से शाँत रहे उसके जीवन ताल में फिर से कोई चंचल मछली तैर गई और अनेकानेक लहरें उठ कर किनारे की ओर दौड़ पड़ी हैं।

आज उसे यदुवंश से मिल कर जितना ही आश्चर्य हुआ उतनी ही अशाँति भी मिली। वह कुछ बात भी तो नहीं कर पाई ? यहाँ वह क्या करता है ? शादी हुई कि नहीं ? बच्चे कितने हैं ? यह सब तो कुछ पूछ ही नहीं पाई। सो कल फिर आने को कहा हीं है तब पूछेगी। लेकिन अगर वह दुबारा न आया तब ? वह पता ठिकाना भी नहीं जानती ! पर यह चिन्ता का विषय नहीं। वह एस० डी० ओ० की पत्नी है। जिले के उच्च अधिकारी की पत्नी। वह चाहेगी तो जिले के किसी भी कोने में रहने वाले किसी भी व्यक्ति का ही नहीं, जन्तु का भी पता लगा लेगी।

इतना सोच कर उसे कुछ संतोष हुआ लेकिन संताप की मात्रा तनिक अधिक थी। वह जी मसोस कर रह गई।

और यदुवंश ! उसकी मनःस्थिति तो इस समय अजीब हो रही थी। महतो से वह क्या कहेगा कि मेम साहब ने क्यों बुलाया था ?

उससे क्या बातें हुईं ? वह महतो जी से अपना और रेणु का सम्बन्ध भी कैसे बता सकेगा ?

वह बहुत ही अधिक परेशान हो गया था। उसे कोई एकांत स्थान की आवश्यकता हैं जहाँ बैठकर वह एक दो घंटे अपना ही मन शाँत कर सके। वह संसार के किसी भी व्यक्ति के सामने इस समय अपना मुँह नहीं दिखाना चाहता है।

उसे पटना की वे सभी घटनाएँ आँखों के आगे बिछी नजर आती हैं जिन के साथ उसका और रेणु का सम्बन्ध जुड़ा था। तब रेणु उसकी सब कुछ थी। वह भी शायद रेणु का सब कुछ था लेकिन आज उसे लगा कि स्थितियों का अन्तर क्या होता है ! अब रेणु यहाँ के उच्च अधिकारी की पत्नी है। क्या अपनी आज की स्थिति में वह कभी फिर उसके सम्मुख जा सकेगा ?

आज ही वह उससे अच्छी तरह स्वतन्त्रता से बातें न कर सका। बरसों बाद मिले अपने एक स्नेही प्राणी से क्या इसी तरह बातें होनी चाहिये !

उसे याद आया जब सर्वप्रथम बार रेणु से उसकी भेंट हुई थी—

आठ-नव वर्ष पहले की बात है। यदुवंश हाई स्कूल पास करके पटना में इन्टर की पढ़ाई करने गया था। जिस मकान के एक ऊपरी कमरे को वह किराये पर लेकर रहता था उसी मकान के पड़ोस में फणीन्द्र गांगुली मुख्तार रहते थे। उन्हीं की भाँजी थी यह रेणु। फणीन्द्र बाबू निःसन्तान व्यक्ति थे लेकिन स्वभाव के बहुत सीधे सरल और शाँत व्यक्ति। और रेणु के माता पिता भी स्वर्गवासी हो

चुके थे। अतः मामा, गांगुली बाबू की स्नेह छाया में ही वह बढ़ रही थी। मामा का स्नेह व्यवहार इस प्रकार का था कि रेणु ने सदा ही अपने को गांगुली बाबू की भाँजी न समझ कर बेटी ही समझा।

पड़ोस में काफी दिन रह कर भी यदुवंश इस गांगुली परिवार से कोई परिचय न प्राप्त कर सका; न कोई सम्बन्ध ही स्थापित कर सका। लेकिन एक दिन बड़ी विचित्र परिस्थितियों में परिचय करना ही पड़ा। हुआ यों कि एक दिन गांगुली बाबू दोपहर के समय कचहरी गए हुए थे। लेकिन उस दिन कालेज किसी कारणवश बन्द था। सो दोपहर को खाना खा कर यदुवंश जरा आराम करने के इरादे से खाट पर लेटा ही था कि गांगुली बाबू के द्वार से चीख-पुकार का एकाएक हंगामा उठ खड़ा हुआ। क्षण भर तो यदुवंश ने इसे बँगाली परिवार का साधारण शोर समझा लेकिन बाद में उसे विवश होकर उठना ही पड़ा। वह यन्त्र-चलित सा गांगुली बाबू के दरवाजे पर आ गया। तभी बेतहाशा भागती हुई गाँगुली बाबू की पत्नी बाहर बैठक में आ कर चीख कर बोली, 'ए बाबू, हमारा घर में एक बहुत बड़ा सर्प निकला है। आँगना में। हमारा बेटी उधर बरामदा में है। कुछ करो बाबू, भीतर आ जाओ।''

यह दोपहर का समय था। आस-पास के घरों से सभी पुरुष अपने-अपने काम पर गए थे। केवल स्त्रियाँ थीं। यह तो इत्तफाक से यदुवंश ही अकेला था। उसी पर सारी आशाएँ इस समय गांगुली बाबू की पत्नी ने उंड़ेल दी थी।

यदुवंश के भी भीतर सेवा भावना ने जोर मारा और वह बिना कुछ अधिक सोचे समझे ही तेजी से घर के भीतर दाखिल हो गया।

वह सीधे आँगन में पहुंचा। तुलसी थाला के जड़ के पास एक, लगभग दो फिट का करैत साँप रेंग रहा था। असली करैत ! जहर की भीषण कालिमा से उसकी पीठ चमक रही थी। देखकर क्षणभर को यदुवंश ठुमका। लेकिन वह देहात से आया था। ऐसे ऐसे साँपों से वह कई बार खेल कर चुका है। लेकिन हाथ में कुछ तो चाहिए ही न ! यदुवंश ने शीघ्रता से चारों ओर दृष्टि डाली कि कोई चीज मिल जाए। परन्तु उसे कहीं कोई लाठी-वाठी नजर न आई। भला एक बँगाली परिवार में लाठी क्यों होती ! लेकिन उसी समय सामने के बरामदे से रेणु ने जाने कहाँ से तीन चार हाथ लम्बा पका बाँस लाकर पास ही फेंका ! फिर क्या था। यदुवंश अब तो अवश्य ही उस साँप को यमलोक पहुंचाने में समर्थ हो सकेगा। अब तक रेंगता हुआ साँप तुलसी थाले की जड़ से हट कर खुले आँगन में ही रेंगने लगा था। खुले में साँप पर प्रहार करने में आसानी होती है।

यदुवंश ने कुशलतापूर्वक पहला प्रहार साँप के सिर पर ही किया। इससे उसका काम तमाम तो नहीं हुआ पर वह पूरी तरह आहत अवश्य हो गया और क्रोध की चरम सीमा में वह अपनी पूँछ उड़ाने लगा। तब तक यदुवंश ने फिर सिर पर और उसके धड़ पर लगातार कई बाँस मारे और गांगुली बाबू के घर में आतंक का वातावरण पैदा करने वाला वह भयानक साँप समाप्त हो गया। साँप के मर जाने पर भी यदुवंश ने उसका सिर कुचल दिया और साँप के मृत शरीर को उसी बाँस पर टाँग कर वह घर के बाहर ले आया और गली में कूड़े के ढेर पर फेंक दिया।

बावन

इस समय यदुवंश बहुत विजय का अनुभव कर रहा था गांगुली बाबू के घर और आस-पास के घरों की स्त्रियाँ उसे नाटक के नायक की तरह आदर और प्यार की निगाह से देख रही थीं। गांगुली बाबू को पत्नी तो ऐसा अनुभव कर रही थीं कि इस समय अगर भगवान ने यदुवंश को न भेजा होता तो जाने वह साँप, शायद उनके घर के सभी प्राणियों को खा ही जाता। और उसी बरामदे में खड़ा रेणु तो जैसे एक नए प्रकार की प्रेरणा ग्रहण कर रही थी। अपने पड़ोस में रहने वाले इस व्यक्ति को अब तक वह केवल एक देहाती विद्यार्थी के रूप में हो जानती रही थी। उसे यह मालूम भी नहीं था कि वह इतना बड़ा बहादुर भी है जो इतने भयानक काले साँप को देखते ही देखते मार डालेगा। यदुवंश के प्रति उसके मन में आदर, श्रद्धा और प्रेम का एक अपार समुद्र अचानक ही लहराने लगा। उसका जी चाहा कि कभी अवसर मिले तो वह यदुवंश से कुछ बातें भी किया करे।

उस दिन शाम को जब गांगुली बाबू कचहरी से वापस आए और पत्नी द्वारा घर में हुए संकट का वर्णन सुना तो उनका जी घबड़ा गया और जब यदुवंश की कृपा की बात सुनी तो उनका भी जी यदुवंश के प्रति आदर से भर गया। फिर जब कूड़े के ढेर पर जा कर साँप के मृत शरीर का देखा तो उन्हें स्थिति की गम्भीरता का और पता लगा।

उसी शाम को उन्होंने यदुवंश को बुलाया और इतनी घनिष्ठता उससे पैदा कर ली कि वह घर का व्यक्ति बन गया। थोड़ी ही देर की बातचीत के बाद ही रेणु ने भीतर से आकर कहा, "मामा, मामी कहती हैं कि इन्हें खाना खिलाकर ही जाने देना।"

इस पर बहुत ही नीतिज्ञ की भाँति गांगुली बाबू ने उत्तर दिया, "इसमें कहलाने की क्या बात है ? यह तो निश्चित ही है। इनको बिना खाए हम भला क्यों जाने देंगे ?"

और उन्होंने यदुवंद से प्रश्न किया, "आप मछली तो खाते होंगे ही। आज झींगा आ गई है। बड़ा सुस्वादिष्ट खाना होगा।"

यदुवंश ने देखा कि यह सब बात यों चटपट की गई कि वह इन्कार कर ही नहीं सका। मछली उसने इसके पूर्व दो बार खाई थी लेकिन अभी वह मछली का ठीक स्वाद पहचान नहीं पाया था। उसने मन में लाख चाहा कि वह इनकार कर दे। एक ही दिन में इतनी दोस्ती ठीक नहीं है, लेकिन गांगुली बाबू ने उसे तो इतना छाप रखा था कि वह बोल ही न सका।

एक बात और थी। ऊपर से अवश्य ही उसे 'नहीं' कहने को जी चाहता था लेकिन मन के भीतर ही भीतर न जाने क्यों इस गांगुली परिवार से सामीप्य ग्रहण करने की एक उत्सुकता, एक अजीब प्रकार की पुलकन और गुदगुदाहट का अनुभव करा रही था। किसी अनजाने परिवार के प्रति इतनी उत्सुकता और इतना मोह उसे पहले कभी नहीं हुआ था। यह नहीं कि इस घटना के पहले उसने कभी इस परिवार को न जाना हो। वह यहाँ के प्रत्येक व्यक्ति को जानता रहा है। पड़ोसी ही है। विशेषकर रेणु को वह रोज स्कूल आते जाते देखता। दो चोटियों वाली इस लड़की को उसने कई बार अपनी खिड़की पर से छिप-छिप कर भी देखा है। उससे घनिष्टता पैदा करने की कई बार आकाँक्षा भी मन में हुई थी। और आज जब अचानक वह सुयोग आ गया है तो जाने क्यों उसे झिझक का अनुभव हो रहा था।

चौवन

आदमी का चरित्र ही यही है कि मनचाही वस्तु मिल जाने पर जल्दी विश्वास नहीं होता।

इसी चक्कर में यदुवंश इस समय न तो पूरी तरह 'न' ही कह सका न खुल कर 'हाँ' ही कह सका। लेकिन गांगुली बाबू समझ गए कि स्वीकृति है उसकी।

फिर तो खाना खाने तक गांगुली बाबू ने यदुवंश से बहुत घुलमिल कर बातें कीं। दुनिया भर की बातें। यदुवंश ने भी बहुत निकटता का अनुभव किया। उसे लगा जैसे वह हमेशा से ही गांगुली परिवार से परिचित है।

फिर रेणु ने आकर बेधड़क स्वर में कहा, "मामा खाना हो गया है। यहीं लाऊँ ?"

गांगुली बाबू ने वहीं खाने का प्रबन्ध किया। बैठक में ही पड़े हुए तखत पर चटाई बिछा कर दोनों बैठ गए। रेणु एक-एक कर के दो थालियाँ ले आई। आधी थाली चावल, मछली, भुनी हुई और रसदार भी और आलू का झोल ! इस प्रकार के खाने का यदुवंश बिल्कुल भी आदी न था लेकिन वातावरण का प्रभाव था कि वह पूरी तरह एक बंगाली की भाँति पलथी मारकर बैठ गया और भात खाने लगा।

रेणु बार-बार आती और कुछ न कुछ लाती। भुनी मछली लाई तब तक यदुवंश अपने थाल को समाप्त नहीं कर पाया था लेकिन गांगुली बाबू ने बहुत जोर देकर कहा,—"भाई यह भुनी मछली का ही तो मजा है। इसे तो अवश्य ही लो।" और इतना सहारा पाकर रेणु थाल में डालकर चली गई। विवश होकर यदुवंश

को सभी भुनी हुई मछलियों का स्वाद लेना ही पड़ा और गाँगुली बाबू से तारीफ भी करनी पड़ी।

उस दिन काफी रात गए यदुवंश को छुट्टी मिल पाई। खाना समाप्त होने के बाद रेणु और उसकी मामी भी खाना खाकर बैठक में आगईं और बहुत देर तक गप्प होती रही। यद्यपि यदुवंश के लिए यह बड़े संकट की स्थिति थी। वह देहात का युवक था। इस प्रकार किसी अपरिचित परिवार की महिलाओं के बीच बैठकर जमकर बातें करना उसके लिए एक नया ही अनुभव था लेकिन शहर में रहते-रहते उसकी इतनी तो झेंप मिट ही गई थी।

गांगुली बाबू की पत्नी तो बार-बार उसी साँप की ही बातें कर रही थीं। और यदुवंश बड़े उत्साह से बता रहा था कि देहात में वह प्रतिदिन साँप देखता है। अब तक दर्जनों साँप मार चुका है और यही नहीं वह साँप की बहुत सी जातियों के बारे में जानता और पहचानता भी है।

यह सब कुछ सुनकर गांगुली बाबू की पत्नी और रेणु पर उसका बहुत गहरा प्रभाव पड़ा।

उस दिन बहुत रात गए जब वह उठने लगा तो गांगुली बाबू ने साफ-साफ कहा, "यदुवंश बाबू, देखिये अब हमारा आपका ताल्लुक हो गया है। कभी किसी बात की जरूरत हो तो बिना किसी संकोच के आ जाइएगा। आज आपने हमारे घर में साँप का रूप धारण कर के घुस आये काल की हत्या कर के हम लोगों के जीवन की रक्षा की है। इसे क्या हम लोग कभी भूलेंगे ?"

यदुवंश भला क्या उत्तर देता ! एक छोटी सी घटना इतना महत्व देगी यह उसे ज्ञात ही न था। कुछ शरमाता, सकुचता वह वापस आ गया। उसे लग रहा था कि इस अनजाने शहर पटना में शायद ही कोई ऐसा परिवार है जो गांगुली परिवार से अधिक भला हो। और जब वह खाट पर लेटा कि सो जाए तो उसे नींद पास फटकती नजर न आई। वह रह-रहकर पड़ोसी परिवार के बीच पहुंच जाता और विशेषकर रेणु ही उसके सामने नाचने लगती। अजीब बात है। आज की घटना और उसके बाद खाना खाने, गप्प करने की पूरी अवधि में रेणु शायद ही कभी एक या दो शब्द बोली हो लेकिन जाने क्यों उसे लेकर यदुवंश अपने भीतर एक भयंकर हलचल का अनुभव कर रहा था। अजीब बात है कि एकाएक वह इस प्रकार अशान्ति के समुद्र में कैसे आ पड़ा।

बहुत पहिले ही जिस दिन उसने रेणु को देखा था उसके मन में कुछ रेंगने सा लगा था। फिर वह अपनी खिड़की पर छिप-छिपकर उसका स्कूल आना-जाना देखता था। और यह कभी आशा भी न की थी कि उसे रेणु से कभी बातें करने का भी अवसर मिलेगा। लेकिन आज जो एकाएक यह अवसर मिल गया, रेणु के इतने सामिप्य का, सो वह एक प्रकार से चकित सा ही हो रहा था।

मनुष्य के जीवन में क्या-क्या स्थितियाँ आ जाती हैं जिनकी वह कभी कल्पना भी नहीं कर सकता।

दूसरे दिन की ही बात है।

सुबह ही से उठकर जल्दी-जल्दी यदुवंश तैयार हो गया। सोचा कि चलकर गांगुली बाबू से कल पैदा की गई घनिष्टता की पुष्टि कर

आए लेकिन जब वह पूरी तरह तैयार होकर चला तो उसकी हिम्मत छूट गई। वह बिना बुलाए नहीं जाएगा। यों जाना उचित भी तो नहीं है। जाने वे लोग क्या समझें !

सो थोड़ी देर का समय यों ही काट कर वह नित्य की तरह कालेज चला गया।

शाम को साइकिल पर सवार वह कालेज से लौट रहा था। अपने मुहल्ले में घुसते ही उसका जी धड़कने लगा। जिन लोगों की स्मृति को वह कालेज में किसी तरह भुलाए हुए था वे फिर एकाएक याद आ गए। यद्यपि उनका याद आना बड़ी मीठी अनुभूति देता था परन्तु फिर भी जाने क्यों जी धड़कने ही लगता है।

लेकिन गजब हो गया। घर से थोड़ी दूर पर ही था कि उसने देखा कि रेणु अपने दरवाजे पर खड़ी थी। तो क्या वह यदुवंश की प्रतीक्षा में हीं खड़ी है ? लेकिन यह विचार आते ही उसका मुँह लाल हो गया जिसे किसी ने देखा तो नहीं पर यदुवंश ने अनुभव अवश्य किया। अजीब प्रकार की निर्बलता का वह अनुभव करने लगा। लगा कि कहीं अपने आप ही साइकिल में ब्रेक न लग जाए और वह गिर पड़े। सो बहुत सावधानी से वह आगे बढ़ा और एकटक, नाक के सीधे यों देखता रहा जैसे रेणु को उसने देखा ही नहीं, न देखेगा ही। लेकिन जब पूरे वेग से साइकिल चलाता हुआ वह गांगुली बाबू के घर के सामने से निकला तो रेणु ने चीख के स्वर में पुकार कर कहा, "जरा सुनिए।"

अट्ठावन

यदुवंश को लगा जैसे करेंट छू गया हो। एकदम से उसने साइकिल की ब्रेक दबा दी और एक झटके के साथ साइकिल रुक गई। और जाने कैसे क्या हुआ कि यदुवंश के हाथ की फाइल छूटकर सड़क पर गिर पड़ी।

इससे उसे बहुत लज्जा का अनुभव हुआ। फाइल को गिरती देखकर रेणु तनिक मुस्कान के साथ आगे बढ़ी कि उठा दे लेकिन तब तक झपट कर यदुवंश साइकिल से उतरा और उसने फाइल उठा ली।

रेणु ने यदुवंश को संकट में देखकर कहा, "मामा जी आप से कुछ बातें करना चाहते हैं। रात को खाना यहीं खाइएगा।"

रेणु ने दो बात जोड़कर कह दी लेकिन उसे समझने में यदुवंश को दो चार क्षण लगे। उसने कहा, "खाना खा लूँगा। उसके लिए कष्ट न कीजिए। हाँ, मामा जी आ जाएँ तो बातें करने आऊँगा।"

रेणु ने फिर कहा, "नहीं खाना भी खाइएगा। आज भी मछलियाँ भूनी गई हैं।"

यदुवंश को लगा कि यह लड़की भी इस गलत धारणा में है कि उसे कल को मछली बहुत अच्छी लगी थी। उसे अपने आप पर हँसी आई। परन्तु रेणु से अधिक बहस करने की उसके ताकत न थी। सो वह चुपचाप चला गया और रेणु स्वीकृति का बोध लेकर घर के भीतर चली गई।

कमरे में आकर यदुवंश रह-रहकर अपने पर ही कुढ़ रहा था कि उसके हाथ की फाइल उस समय क्यों गिर गई? क्यों वह रेणु को देखकर इतना घबड़ा जाता है? वह सोच रहा था कि रेणु मन ही मन कितना हँसी होगी।

उनसठ

उस शाम वह घर से वाहर न निकला। पहले सोचा था कि फुटबाल मैच देखने जाएगा लेकिन फिर न गया। क्यों न गया, इसका उसे खुद भी कारण नहीं ज्ञात हुआ।

क़रीब आठ बजे एकाएक गांगुली बाबू ने उसे पुकारा। खिड़की से झाँककर यदुवंश ने देखा कि सड़क पर खड़े गांगुली बाबू उसे पुकार रहे हैं। यदुवंश को देखकर पूछा, "क्यों यदुवंश जी, अंधेरे में ही क्यों हैं ? रोशनी नहीं जलाई क्या ? आइए न !"

सचमुच यदुवंश आज रोशनी जलाना भूल गया था। उसे आज कब अंधेरा हो गया इसका ज्ञान ही नहीं हुआ। उसने जल्दी से कहा, "चलिए मैं फौरन आया। अभी आया।"

दूसरे क्षण जब यदुवंश ने खिड़की से झाँककर देखा तब तक गांगुली वावू चले गए थे। कुछ मिनटों में अपने को सम्हालकर यदुवंश ने घर में लालटेन जलाई। उसी धुँधली रोशनी में उसने शीशा सामने रखकर जरा सम्हालकर वाल ठीक किए, कपड़े ढंग से पहने और थोड़ी सी क्रीम भी मुँह पर पोत ली। इतना करके उसने एक नए प्रकार की ताजगी का अनुभव किया। इस बिचार ने ही कि गांगुली बाबू के घर रेणु से भी वातें करने का मौका मिलेगा वह वड़ी सतर्कता का अनुभव करता था। अजीब वात है कि एक छोटी सी नई परिचिता लड़की ने इतना ज्यादा प्रभाव उसपर कैसे डाल लिया है। अगर आकर्षण और खिचाव की रफ्तार इतनी ही रहेगी तब भविष्य में क्या होगा ?

धड़कते हृदय से अपना कमरा बन्द करके यदुवंश जरा सजा-वजा सा आकर गांगुली बाबू की बैठक में उपस्थित हो गया। आश्चर्य की

बात यह थी कि आज केवल यदुवंश ने ही अपने को सतर्कता से सजाया नहीं था बल्कि गांगुली बाबू के बैठक की स्थिति भी आज कुछ सुधरी थी। दो तीन कलंडर जाने कहाँ से लाकर सूनी दीवालों पर टाँग दिए गए थे और तखत पर बिना दरी या गद्दे के ही एक रंगीन चादर बिछा दी गई थी। एक कुर्सी भी अधिक थी। और फ़र्श पर भी शायद झाड़ू दी गई थी। फ़र्श उतनी साफ लगती थी जितनी सफाई किसी बच्चे के मुँह धो देने पर आ जाती है।

बैठक में जब यदुवंश घुस रहा था उसी समय भीतर से गांगुली बाबू भी आए। उनके हाथ में ताजा भरा गया हुक्का था और वे बड़े निश्चित और खुश मालूम होते थे।

यदुवंश को देखते ही उन्होंने पूछा, "कहिए महाशय, रेणु कह रही थी आपने हमारी दावत मंजूर नहीं की!"

"क्या, कैसी दावत, गांगुली बाबू?"

"क्यों, मैंने रेणु से कहलाया था न कि आज रात का खाना आप यहीं खाएँ।"

'ओह, बात यह थी कि कल ही तो खाया था न! क्या रोज-रोज दावत होगी?"

"देखिए यदुवंश बाबू! अब हमारा आपका घर का ताल्लुक है। जब हम खिलाएँगे आपको खाना होगा। हम कोई बात सुनेंगे नहीं।" इतना कहते कहते वे आकर एक कुर्सी पर बैठ गए। फिर तो यदुवंश भी दूसरी कुर्सी पर बैठ गया। गांगुली बाबू की इस समय की बातें उसे अजीब लग रही थीं। हल्की सी हँसी हँस कर उसने कहा,

"अच्छा आपकी जो आज्ञा होगी सो करूँगा ?"

तमाखू का स्वाद लेते हुए लम्बी सी धुएँ की बौछार छोड़ते हुए गांगुली बाबू ने संतुष्ट होकर कहा, "यह बात आपने अब ठीक कहा।"

क्षण भर सन्नाटा रहा। यदुवंश से रेणु ने कहा था कि मामा कुछ बातें करेंगे सो वह बात करें इसी की उसे इंतजारी थी।

तभी गांगुली बाबू ने कहा, "सुना आपने ?"

यदुवंश चौकन्ना हो गया।

"कल मेरी श्रीमती ने रातभर उसी साँप का सपना देखा।"

"औरतों का दिल कमजोर होता है न, इसी से शायद . ।"

"नहीं, यह नहीं मानूँगा। आजकल की लड़कियों का दिल इतना कमजोर नहीं होता। रेणु तो बिल्कुल ही नहीं डरी। उसपर तो कोई भी प्रभाव नहीं।"

यदुवंश को लगा कि यह गांगुली बाबू अजीब ही व्यक्ति हैं। सदा ही रेणु की, अपनी पत्नी की बातें करते हैं। इसपर हाँ या न भी तो नहीं कहा जा सकता।

क्षण भर बाद उन्होंने कहा,

"यदुवंश बाबू एक विचार कल आया।"

"सो क्या ?"

"यही कि आप तो अब घर के ही प्राणी हो गए हैं, सोचता हूँ आपसे कुछ बेगार लिया करूँ ?"

यदुवंश कुछ न समझा, मुँह ताकता रहा।

"आप नहीं समझे ? मैं चाहता था कि शाम तो आपकी खाली ही रहती है न ! तो अगर घंटा आधा घंटा आप रेणु को हिन्दी पढ़ा दिया करें तो कैसा हो ? बात यह है कि उसे हिन्दी नहीं आती और कोई अनजान मास्टर रखने की हिम्मत नहीं पड़ती । आप तो जानते हैं आजकल का कैसा जमाना है । सो अगर आप यह जिम्मेदारी ले लें तो मुझे बहुत बड़ी चिन्ता से छुट्टी मिलेगी ।"

यदुवंश इस प्रकार की बातों के लिए बिल्कुल तैयार न था । लेकिन उसने कोई भाव अपने चेहरे पर न आने दिया यद्यपि उसका हृदय अजीब तरह से उछलने लगा था । इस प्रकार की बातें उससे पहले कभी किसी ने नहीं की जिससे उसे इतनी हैरानी हो । यद्यपि यह प्रस्ताव उसे बहुत सुखद लग रहा था लेकिन प्रत्यक्ष में वह उत्साह का प्रदर्शन करना भी तो नहीं चाहता था । बहुत संकोच के साथ उसने कहा,

"अच्छी बात है मैं शाम को हिन्दी पढ़ा दिया करूँगा रेणु को ।"

हुक्के की चिलम में फूँक मारते हुए गांगुली बाबू ने कहा,

"और एक बात और थी कि अगर आप अपने 'मेस' का हिसाब बन्द कर दें तब कैसा हो ?"

"मेस का हिसाब बन्द कर दूँ, क्यों ?"

"क्यों बेकार का यह खर्च रखिए । मेरे यहाँ ही आपको खाना-खाना पड़ेगा ।"

यदुवंश एकदम घबड़ा गया । उसे लगा जैसे यह गांगुली बाबू उसे किसी चक्कर में फँसा रहे हों । सो चौखकर उसने कहा,

"नहीं-नहीं, यह नहीं होगा । मैं जैसे खाने-पीने का प्रबन्ध किए हूँ वह काफी ठीक है । आप चिन्ता न करें ।"

तिरसठ

"तो क्या रेणु को मुफ्त पढ़ाइयेगा !"

अब यदुवंश ने समझा, "मुफ्त का प्रश्न ही क्या है गांगुली बाबू ? जब मैं आपके घर का ही प्राणी हो गया तो क्या थोड़ी देर पढ़ा देने का रुपया लूँगा ?"

"सो तो आप ठीक कहते हैं लेकिन इस प्रकार उचित नहीं है। आखिर मुझे संतोष कैसे हो ?"

"गांगुली बाबू, आपकी आज्ञा है, मैं पढ़ा दिया करूँगा, बस और बातों की आवश्यकता नहीं।"

जैसे विवश होकर गांगुली बाबू को चुप होना ही पड़ा। अब तक हुक्का ठण्डा हो गया था। हुक्के को तखत के नीचे दीवाल के सहारे रखकर वे फिर बातों में मशगूल हो गए। थोड़ी देर बाद खाना खाया। कल की ही तरह मछलियाँ भी थीं।

उस दिन यदुवंश से उनकी फिर कोई खास बात नहीं हुई। यदुवंश घर लौटा तो उसमें एक नए प्रकार की उमंग थी। नई शक्ति जैसे उसके नसों में समा गई हो। रेणु को प्रति दिन एक घंटा पढ़ाएगा—इस कल्पना से ही उसे अजीब प्रकार की पुलकन पैदा हो रही थी लेकिन एक संकोच का आवरण भी वह पूरी तरह नहीं उतार पाया है अब तक। उसे रह-रह कर यही लग रहा था कि रेणु को वह भला कैसे पढ़ा पाएगा ? जिसे देखते ही उसके शरीर में झनझनाहट पैदा हो जाती है। मस्तिष्क अपनी जगह से टल-सा जाता है। उस समय किस प्रकार साइकिल रुक गई थी और हाथ की फाइल तक गिर गई थी। सो इस दशा में कैसे होगा ?

चौंसठ

लेकिन अब तो किसी न किसी प्रकार निभाना ही होगा। जिस रेणु को वह खिड़की से छिप-छिप कर देखा करता था उसका इतना सामिप्य मिलेगा, जिससे एक क्षण बात करने को वह अपना सौभाग्य मानता उससे प्रति दिन एक घंट बात ही नहीं एकांत में बात करने को मिलेगा, और क्या चाहिए !

पुलक, संकोच, धैर्य और डर की मिश्रित भावना से उसने किसी प्रकार रात काटी, दिन काटा और कालेज से आकर कपड़े बदल कर जूते की धूल झाड़ कर, मुँह पर क्रीम की नई परत पोत कर वह पाँच वजे गांगुली बाबू के यहाँ जा पहुंचा।

गांगुली बाबू अभी ही कचहरी से आए थे। चाय भी नहीं पी थी। बैठके में अकेले ही बैठे थे कि यदुवंश जा पहुंचा। यदुवंश को देखते ही गांगुली बाबू का चेहरा खिल उठा।

"आइए, आइए !"

"आप आज कुछ गम्भीर से लग रहे हैं, क्या बात है ?"

"आज एक 'केस' में हार हो गई। मामूली ही 'केस' था। जीत भी निश्चित थी लेकिन मैजिस्ट्रेट जरा सनकी है। हार गया वही सोच रहा था।"

"तो इतने अफसोस की क्या बात है ?"

"अफसोस, अफसोस क्यों नहीं ? क्या आप समझते हैं कि वह मुवक्किल फिर आएगा ?"

यदुवंश कहने जा रहा था कि फीस तो पूरी दे गया न, चिन्ता अब न कीजिए, कि तभी हाथों में दो प्याला चाय लिए हुए रेणु आ गई। दोनों को ही आश्चर्य लगा कि रेणु कैसे जान गई कि यदुवंश

भी आ गया है कि दो प्यालों में चाय लाई। लेकिन इस बात को किसी ने भी नहीं खींचा न तो गांगुली बाबू ने, न यदुवंश ने। हाथ बढ़ाकर चाय ले लेने में ही दोनों ने खैरियत समझी।

चाय का प्याला हाथ में लेकर गांगुली बाबू ने कहा, "रेणु, अब तू आकर पढ़। हाँ, जरा मेरा हुक्का भी ठीक करके दे देना!"

यह बात सुनकर यदुवंश मन ही मन हँसा। गांगुली बाबू अपनी बात कभी न भूलेंगे। अजीब आदमी हैं।

और उन दोनों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब चाय समाप्त होने के पहले ही रेणु हुक्का भी ले आई और साथ ही अपनी किताबें भी। पढ़ने के प्रति उसकी इतनी तीव्र इच्छा है यह दोनों के लिए एक नया ही अनुभव था।

इसके बाद गांगुली बाबू तो हुक्के का स्वाद लेने लगे और यदुवंश अपनी शिष्या में बझ गया।

पढ़ाई का श्री गणेश हुआ।

गांगुली बाबू ने संतोष की साँस ली।

यह क्रम चलता रहा।

प्रति दिन यदुवंश पाँच बजते ही पहुंचता। गांगुली बाबू के साथ ही चाय पीता और जब वह पढ़ाई शुरू करता तो गांगुली बाबू हुक्का लेकर भीतर पत्नी के पास चले जाते।

रोज ही पढ़ाई चलती रही।

काफी अच्छी तरह पढ़ाई चलती रही।

और शीघ्र ही स्थिति यह आ गई कि सुबह होते ही रेणु विकल होकर इन्तजार करती कि कैसे पाँच बजे, यदुवंश आवे, पढ़ाई शुरू

हो। और यदुवंश भी जैसे उन्हीं क्षणों की याद में दिन काटता यानी रेणु और यदुवंश दोनों ही जैसे केवल उन्हीं क्षणों के लिए जी रहे हों।

यदुवंश को याद है कि बिना किसी उल्लेखनीय घटना के ही महीनों बीत गए। यदुवंश के मन में रेणु के प्रति बहुत प्यार पैदा हो गया लेकिन वह कभी हिम्मत करके भी रेणु से कुछ कह न पाया।

गांगुली बाबू खुश थे कि उनकी रेणु हिन्दी में बहुत तेज हो गई है।

लेकिन रेणु की हालत किसी को नहीं मालूम! उसके दिल का यदि ठीक चित्रण किया जाय तो ज्ञात होगा कि हर समय वह यही मनाती रहती है कि उसकी यह एक घंटे वाली, किसी भी तरह हर समय की पढ़ाई हो जाय। हर समय यदुवंश उसके पास हो और वह पढ़ती रहे—उसी से हिन्दी पढ़ती रहे, सब कुछ पढ़ती रहे।

यदुवंश को आज भी सब याद है—

उसको पढ़ाते हुए लगभग छः महीने होने को आए।

जाड़े के दिन थे। उस दिन यदुवंश की तबियत कुछ खराब थी। पढ़ाने का जी नहीं था लेकिन ठीक समय पर उस घर में गये बिना उससे रहा भी तो नहीं जाता। सो सोचा कि चलकर बैठा ही रहेगा—पढ़ाई न होगी पर जाएगा जरूर।

सो जब वह बैठके में पहुंचा तो लगा कि घर में बिल्कुल सन्नाटा है और जैसे घर में कोई भी आदमी नहीं है। लेकिन इसके पहुंचते ही रेणु आ गई। और बोली,

"आज पढ़ने का जी नहीं है। तबियत कुछ ठीक नहीं है।"

सड़सठ

"मेरी भी तबियत आज ठीक नहीं। आज मत पढ़ना। हाँ गांगुली बाबू कहाँ है ?"

"मामा और मामी दोनों ही चटर्जी बाबू के यहाँ शादी में गए हैं।"

"तो तुम अकेली ही हो, डर नहीं लगता ?"

"डर काहे का ? आप आने वाले थे न ?"

"हाँ तो अब तुम आराम करो मैं भी चलता हूँ।"

"नहीं नहीं, आपका भी जी ठीक नहीं है न। आइए, चाय बनाई है। लाती हूँ।"

कहकर रेणु उत्तर का इन्तजार किए बिना ही चली गई।

यदुवंश का जी अजीब भावना से भर गया। उसकी धड़कन कई गुना बढ़ गई। यह रेणु भी अजीब लड़की है। क्यों उसके मन पर इस प्रकार छाई जा रही है ? क्यों वह रेणु के लिए हर समय बेचैन रहता है ? अब तो वह उसके प्रति अपना प्रेम प्रकट भी नहीं कर सकता। उसे पढ़ाता जो है। कहीं कुछ गड़बड़ हुआ तो गांगुली बाबू यही कहेंगे कि यदुवंश भी दुनिया के तमाम बुरे छोकड़ों में से एक है। इसलिए वह कुछ कह भी नहीं सकता। लेकिन अपने दिल को वह समझावे भी कैसे ? रेणु जब सामने आ जाती है तो उसकी तमाम तर्क शक्तियाँ बेकार हो जाती हैं। उसका जी मचलने लगता है। लेकिन उसे अपने मन पर काबू रखना पड़ेगा। उसे सारी मर्यादा निभानी है। ऐसा वह कुछ न करेगा कि गांगुली बाबू उसे झूठा और अविश्वासी समझें। जब उन्होंने उससे घर का सम्बन्ध बना लिया है तो उसकी मान-रक्षा करनी ही है। वह मन ही मन महाबली

बनने की कोशिश कर रहा था। तभी रेणु चाय लेकर आ गई। दो प्यालों में चाय थी। दोनों ही प्याले उसने तखत पर रख दिए और उसी पर बैठ गई। यदुवंश भी उठकर आकर तखत पर ही बैठ गया।

दोनों ही चाय पीने लगे।

समस्या थी कि दोनों में कौन बात शुरू करे। क्योंकि यह सन्नाटा भी तो अच्छा नहीं लग रहा था।

लेकिन बिना बात के ही चाय समाप्त हो गई।

फिर अचानक रेणु ने कहा, उसकी आवाज कुछ अजीब-सी काँपती सी लगी।

"मुझे आप से एक बात कहनी थी।"

बात बिना सुने ही यदुवंश का दिल एक आशंका से काँप उठा। वह जानता नहीं कि रेणु क्या कहेगी लेकिन रेणु की आवाज उसको आज नई-सी लग रही थी। इससे उसे आशंका हुई थी। उसने सिर उठाकर रेणु को देखा। उसका गोरा चेहरा आवश्यकता से अधिक लाल था। आँखों में पानी डोल रहा था। जैसे बड़ी मुश्किल से वह आँखें ऊपर उठा सक रही हो?

यदुवंश का मन भी विचलित हो उठा। अब क्या हो। इच्छा हुई कि बढ़कर रेणु को पकड़ ले और गले से लगा ले। लेकिन उसे अविश्वासी नहीं बनना था। अपने को बहुत दृढ़ करके उसने कहा, "बोलो न, रेणु क्या कहना चाहती हो।"

"मैं आपको...।"इसके बाद जैसे किसी दैत्य ने रेणु का गला दबा दिया हो।

यदुवंश ने स्थिति सम्हालना चाहा। कहा,

"क्या बात है बोलो न ? तुम्हें मैं अच्छा नहीं लगता ? मैं न आया करूँ ? मेरे आने से तुम्हें परेशानी होती है ?"

जैसे दैत्य ने एकाएक रेणु का गला छोड़ दिया हो, वह जल्दी-जल्दी बोली,

"मैं आपसे प्रेम करती हूँ। मुझे आप बचा लीजिए। मुझे थोड़ा सा यहाँ स्थान दीजिए।"

कहती-कहती वह बदहवास की तरह उठी और यदुवंश के पावों पर बिछ गई।

यदुवंश जैसे सोते से जागा हो। कुछ समझ में फौरन ही न आया। यह सब क्या हो गया ? क्या इतनी दूर रेणु आ गई है ? वह अपने को, वह रेणु को कैसे सम्हाले !

उसने रेणु को भावावेश में उठा लिया और अपने आलिंगन में दबोच कर सांत्वना देने की तरह ही उसके सिर पर हाथ फेरने लगा। रेणु के हृदय की घवड़ाहट और धड़कन का तूफान जैसे पूरे वेग से हाहाकार मचा रहा हो। और वह तूफान यदुवंश को भी अब बिना डुबोए न छोड़ेगा !

किसी युवती के इतने सामिप्य का यह पहला ही अनुभव था। पहली बार ही किसी युवती को इस प्रकार उसने आलिंगन में दबोचा था। अजीब प्रकार की अनूभूति का उसे अनुभव हो रहा था ?

वह किस प्रकार अपने और रेणु के इस तूफान को रोके ? और मन में जैसे गांगुली बाबू की क्रोध से भरी आवाज लगातार सुनाई पड़ रही थी—"अविश्वासी ! नीच ! झूठा, ! अविश्वासी !"

लगा कि जैसे एक नहीं अनेक गाँगुली बाबू आकर उस पर प्रहार कर रहे हों—अविश्वासी—अविश्वासी !

सत्तर

वह एकदम से घबड़ा गया। एक झटके से उसने रेणु को अलग किया। और उसे, अपने से लिवा जाकर कुर्सी पर बैठाया। रेणु बेतरह रो रही थी। उसे क्या हो गया है। उसका यह नया रूप वह देख रहा है जिसकी उसे कल्पना भी थी। वह रेणु को कैसे और क्या समझावे ?

क्या वह स्वीकार कर ले कि रेणु से उसे भी प्यार है।

क्या वह साफ कह दे कि वह रेणु से प्यार नहीं करता !

उसके सामने प्रत्यक्ष रेणु की प्रतिमा थी—

उसके सामने ही गांगुली बाबू का रौद्र रूप भी था !

वह क्या कहे ? क्या न कहे ?

वह रेणु के लिए विश्वासी बने या गांगुली बाबू के लिए अविश्वासी ?

बड़ी हिम्मत करके उसने रेणु से कहा,

"रेणु इस प्रकार नहीं रोते ! मेरी बात सुनो ?"

रेणु के रुदन का वेग कुछ हल्का हुआ।

"रेणु यह तुम्हारी मूर्खता है। तेरे मामा क्या कहेंगे ?"

रेणु ने बड़ी हिम्मत करके कहा, "देखिए मेरी रक्षा कीजिए ?"

"क्या हुआ है तुम्हें ?"

"कुछ भी नहीं ! मेरा उद्धार कीजिए। मैं आपके चरणों में स्थान चाहती हूँ।"

"लेकिन यह सब क्यों ?"

"मैं ..मैं . !"

एकहत्तर

"......।" यदुवंश चुप ही रहा। यह सब जो कुछ हो रहा था उसपर उसे विश्वास नहीं होता था। आखिर रेणु यह सब क्या और क्यों कर रही है? उसे कभी अपने पर और कभी रेणु पर आश्चर्य हो रहा था। यद्यपि इस अवसर को वह स्वीकार भी करना ही चाहता था। रेणु ने कहा—

"मैं आपके बिना नहीं रह सकूँगी।"

"और तुम्हारे मामा जी, मामा जी!"

"मैं अपना भर जानती हूँ"

"लेकिन रेणु यह तुम्हारी मूर्खता है।" जाने क्यों यदुवंश को यह सब, और रेणु को स्वीकार कर लेने की हिम्मत नहीं पड़ रही थी। जाने बाद में क्या हो? अभी तो जाने किस उत्तेजनावश रेणु इस वेग से आगे बढ़ आई है और बाद में पता नहीं यह वेग रहे या न रहे। फिर तो सारी जिम्मेदारी उसी पर पड़ जाएगी न! रेणु तो 'बच्ची' कह दी जाएगी और इस परदेश में उस बेचारे पर ही सब आ पड़ेगा। फिर अगर वह इसे ग्रहण भी कर ले तो क्या शादी हो सकेगी? वह तो बंगालिन है! क्या उनकी शादी को उसके माता-पिता या, रेणु के मामा-मामी भी कभी स्वीकार कर सकेंगे? यदुवंश के दिल पर रह-रह कर कोई जैसे प्रहार कर रहा हो और वह भविष्य की बातें सोच-सोचकर अपनी हिम्मत छूटती देख रहा था। दूसरे अप्रत्याशित रूप से यह सब जो रेणु कर गई, उसपर भी उसे पूरी तरह विश्वास नहीं हो रहा था। सो वह बोल उठा,

"रेणु, मुझसे यह न होगा। मैं इस घर में विश्वासघात नहीं करूँगा। मुख्तार साहब के साथ विश्वासघात! मैं यह कैसे करूँ? और मेरी तुम्हारी शादी भी तो नहीं हो सकती न!"

"क्यों ?"

"क्या जाँत-पाँत का सारा बन्धन यों ही तोड़ने में हम सफल हो सकेंगे ?"

"लेकिन मैं आपके बिना रह जो नहीं सकती !"

'रेणु, आवेश में इस प्रकार की बातें नहीं करते !"

"लेकिन मैं आवेश में नहीं हूँ।"

"सो ठीक है...सो ठीक है।" यदुवंश कुछ अब घबड़ा-सा गया, "अच्छा मैं जरा सोच लूँ। फिर बताऊँगा।"

यदुवंश ने जान छुड़ानी चाही। जाने क्यों उसे इस समय बहुत कमजोरी लग रही थी। उसे तो अब रेणु से आँखें मिलाने की भी हिम्मत नहीं हो रही थी।

यदुवंश की इस बात से रेणु को जैसे धक्का सा लगा। वह अगल खड़ी हो गई। कुछ बोली नहीं—धीरे-धीरे रोती रही, रोती रही।

यदुवंश को लगा कि कैसे वह भागकर कहीं अंधेरे में छिप जाए। रेणु को जो वह कष्ट दे रहा है, सच ही वह अन्याय है लेकिन न्याय के पक्ष के लिए उसमें शक्ति भी तो नहीं है।

"अच्छा रेणु मैं अभी जाता हूँ।" कहते-कहते वह मुड़ा और प्राण बचाकर जैसे भागा। वह इतना भयभीत हो गया था कि यह भी मुड़कर न देखा कि रेणु क्या कर रही है या कुछ कह तो नहीं रही।

रेणु पर तो जैसे बिजली गिर पड़ी। उसे यदुवंश से इसकी आशा न थी। जिसे उसने अपना प्रेमी समझा था वह तो निहायत

बुज़दिल सिद्ध हुआ। कितनी हिम्मत करके उसने उसके सामने अपने को खोला था। लेकिन अब लग रहा था जैसे सारा प्रेम-प्रदर्शन उसका कोई शर्मनाक और गन्दा काम था या उसने कोई महान मूर्खता कर डाली है। घबड़ाकर उसने किवाड़े बन्द कर लिये। अंधेरे कमरे के सूनेपन में उसे तनिक शांति मिली।

वहीं तखत पर वह गिर कर रोने लगी। अपने मन की व्यथा वह कहाँ प्रगट करे ? किससे कहे ?

तखत की सख्त फर्श पर उसे लगा कि वह निर्जीव काठ ही उसे सांत्वना दे रहा है।

फिर कब तक वह यों ही पड़ी रही उसे पता नहीं। जब मामा मामी वापस आये तब ही उसने उठ कर किवाड़े खोले थे।

और उस रात, पूरी रात तक यदुवंश की खिड़की खुली रही कमरे की रोशनी भी जलती रही।

दूसरे दिन, दिन भर उसे किसी ने नहीं देखा।

तीसरे दिन तनिक चिन्ता से जब गाँगुली बाबू ने जाकर पता लगाया तो ज्ञात हुआ कि उसे परसों रात भर बुखार चढ़ा रहा और कल वह घर चला गया।

घर आकर गाँगुली बाबू ने आँगन में खड़े होकर पत्नी को पुकार कर कहा—

"अजी, सुनती हो ! यदुवंश बाबू परसों रात भर बुखार में तड़पता रहा और कल घर चला गया। उसी बुखार की स्थिति में चला गया। क्या बताएँ—उससे इतना कहा कि अपना घर समझ कर समय जरूरत पर पुकार लिया करो। लेकिन वह संकोच

करता है । बुखार में घर गया है, जाने रास्ते में कैसे क्या हुआ होगा ।

रेणु मामी के पास बैठी पाँव से हँसुआ दबाकर बैगन काट रही थी। उसका हाथ रुक गया । सुन कर लगा कि उसका शरीर पत्थर का हो गया है और उसके दिल की धड़कन रुक गई है । वह मामा के एक एक शब्द को गौर से सुन रही थी । —बीमार होकर घर चला गया—बुखार में गया है—रास्ते में कैसे क्या हुआ होगा—।

तभी मामी ने कहा, "बहुत संकोच करता है। स्वभाव ही ऐसा है । भाग गया, सोचा होगा कि किसी को क्यों तकलीफ दें ।"

रेणु से अधिक बैठा न रहा गया । झटक कर वह उठी और ऊपर चली गई । मामा मामी देखते ही रह गये ।

और पाँच दिन और बीते ।

इन पाँच दिनों में रेणु जीवित रही । यही आश्चर्य की बात थी ।

दिन भर मुँह औंधा किये पड़ी रहती । रोती रहती—रोती रहती । मामी से कहती, जो नहीं लगता ।

और छठवें दिन के बाद यदुवंश देहात से लौटा । रिक्शे से उतर ही रहा था कि गाँगुली बाबू कचहरी जाने के लिये घर से निकले थे, सो देख कर पुकार उठे—"कहिये यदुवंश बाबू ! कैसी तबियत है ? आप तो बिना बताये ही चले गये । हम लोगों को इतना पराया समझा ?"

"अब ठीक हूँ ।"

"अच्छा तो कचहरी से लौट कर रात को बातचीत होगी। जरा जल्दी जाऊँगा। रेणु की तबियत कुछ गड़बड़ है सो भट्टाचार्य डाक्टर के पास भी जाना है—अच्छा।" और मुख्तार साहब चले गए।

रेणु बीमार है सुन कर फिर उसे फिर अशान्ति ने घेर लिया। सामान वामान जैसे-तैसे रख कर वह रेणु के घर गया।

आँगन में ही मामी थीं। देखते ही बैठके में आ गईं। वही उलाहना जो मुख्तार साहब ने दिया था! उससे छुट्टी पाकर यदुवंश ने पूछा—"रेणु को क्या हुआ है?"

मामी जरा पास खिसक आईं। जैसे कोई राज खोल रही हों। धीरे से बोलीं—"बात यह है कि पाँच-छः दिनों से वह रोना-धोना मचाए है!"

"क्यों? अचानक यदुवंश ने प्रश्न कर दिया। उसे लगा कि इस प्रश्न का उत्तर उससे अधिक कोई नहीं जानता।

मामी ने कहा, "सच कहूँ......।"

यदुवंश का जी धड़कने लगा। चेहरा गिरने लगा।

मामी ने कहा, "उसका ब्याह ठीक कर रही हूँ। लड़का निर्धन है। इससे पट जायगी। लेकिन तहसीलदारी का इम्तहान भी दे रहा है। तेज है, पास होकर तहसीलदार बन जायगा न।"

यदुवंश के जान में जान आई। साँस चलने लगी। मामी कहती गईं "वह कहती है कि ब्याह नहीं करूँगी। इसलिये रोना-धोना मचा रखा है। तुम्हीं बताओ न, अब क्या उसकी शादी की उम्र नहीं हुई?"

छिहत्तर

यदुवंश ने कोई ऐसा भाव नहीं दिखाया कि बात आगे बढ़ती। मामी वापस जाती हुई बोलीं, "जरा जाकर समझाइये न!"

यदुवंश को लगा जैसे मामी ने उसे उठा कर छत पर रख दिया हो। एक साँस में वह सीढी चढ़ गया। अपने कमरे में रेणु खाट पर लेटी थी। यदुवंश ने जाकर पुकारा, "रेणु!"

वह घबड़ा कर उठ गई। उसे न तो यदुवंश के आने की सूचना थी न अनुमान। सो आश्चर्य में जैसे वह डूब गई।

"कैसी तबियत है?" यदुवंश ने पूछा।

रेणु चाहती थी कि आज वह पत्थर की मूर्ति ही बनी रहे। सो यों ही कह दिया, "ठीक हूँ।"

अब भला यदुवंश क्या प्रश्न करे? क्षण भर, कई क्षण सन्नाटा रहा। फिर यदुवंश ने हिम्मत किया।

"रेणु इधर आना।" कह कर वह छत पर आ गया।

रेणु भी उठ कर आई।

"रेणु, तेरा पागलपन नहीं उतरा?"

रेणु चुप।

"तू आखिर यह सब क्यों कर रही है? तुझे वह शादी स्वीकार करनी चाहिये जो मामा और मामी तय कर रहे हैं। क्या उन्हें कष्ट देगी? उन्होंने तुम्हें जितने प्यार से पाला है क्या उसका यही परिणाम होगा? यदुवंश वह सब कह रहा था जिसके लिये वह तैयार होकर नहीं आया था लेकिन इस समय वह कुछ ऐसी ही बातें करना चाहता था जिससे रेणु को उससे घृणा हो जाय। वह उसका विचार छोड़ दे—उसने कहा,

"जानती हो मैं कभी तुमसे शादी नहीं कर सकता। फिर सोचो तुम्हारी क्या स्थिति होगी।"

अब तक रेणु आँचल में मुँह छिपा कर फिर रोने लगी थी।

यदुवंश जरा कड़ा पड़ा।

"देखो। हरदम रोने से कुछ नहीं होगा। अक्ल से काम लो। आज से मेरा ख्याल छोड़ दो और मामा-मामी की आज्ञा मानो।" इतना कहकर वह रेणु को खुले आकाश के नीचे यों ही रोता छोड़ कर घम्-घम् सीढ़ियाँ उतर कर चला गया।

वहाँ और अधिक ठहरना क्या उसके लिये सम्भव न था? जो कुछ उसने कहा, क्या वह कभी साधारण रूप में कह पाता? लेकिन उसे इस समय ख्याल था—रेणु के भविष्य का! गाँगुली परिवार की प्रतिष्ठा का·!

फिर कई दिनों वह मतवालों की तरह से भटकता रहा। इधर उधर, जैसे उसने कोई हत्या की हो और हत्या का भूत उसे परेशान कर रहा हो!

इसके बाद की अनेक घटनाएँ हैं जो यदुवंश को आज भी बिल्कुल स्पष्ट रूप में याद हैं। लेकिन उन्हें फिर स्मरण करके वह अपने को अधिक परेशान करने की हिम्मत नहीं रखता।

संक्षेप में, उसने अपने घर की ही तरह रेणु की शादी में खूब काम किया। और जब विवाह के पाँच छः दिनों बाद रेणु ससुराल से वापस आई तो वह मिलने गया। रेणु ने इस बार खुशी-खुशी यदुवंश का स्वागत किया। यदुवंश को तो उससे नजर मिलाने में भी झेंप लगती थी लेकिन रेणु उसे ऊपर पकड़ ले गई।

यदुवंश का जी धड़क रहा था। रेणु अब पहले से अधिक सुन्दर, अधिक तेज दिखाई पड़ी।

रेणु ने कहा, "आप मुझे पराया समझते हैं ?"

यदुवंश को पसीना आ गया, "नहीं तो रेणु !"

"फिर इतना डरते क्यों हो ?"

यदुवंश हँस पड़ा। जैसे जान बची लाखों पाये !

"सुनिए आपने मुझ पर जो कृपा की उसके लिये जीवन भर एहसान मानूँगी !"

"कृपा ! कैसी कृपा !"

"हाँ कृपा ! बस एक बात कहनी थी कि पता नहीं अब फिर जीवन में भेंट हो या न हो, पर एक बात की प्रार्थना थी कि मुझे भूलियेगा नहीं। मैं आप को कभी नहीं भूल सकती...जीवन में सब कुछ मन चाहा नहीं मिलता। लेकिन अपने मन को तो अपने जैसा बनाया ही जा सकता है।"

यदुवंश को लगा कि जान छुड़ानी मुश्किल है सो टालने के लिये अभिनय किया, "शादी होते ही पुरखिन बन गई तू ? बस कर......बस कर......फिर बातचीत होगी। अभी जाना है।"

"भागिए नहीं। एक बात और सुनते जाइये। मैं गलत नहीं कहती। मैं कहीं भी रहूँ आपको नहीं भूलूंगी। हाँ, कहना था कि मेरे लायक कभी कोई आवश्यकता हो तो सूचना दीजियेगा। अब मेरे पति तहसीलदार हो जायँगे। इम्तहान में पास हो गए हैं। अब रुपये पैसे की भी कमी न रहेगी !"

यदुवंश का मुँह कान तक लाल हो गया। वह घबड़ा गया।

"मेरा अपमान करती हो ? क्या मैं तुमसे रुपये पैसे की सहायता लूंगा ? क्या मैं ऐसा गया गुजरा हूँ ?"

उसी भाव में रेणु ने कहा, "क्या आप मुझे गैर समझने लगे ?"

"कुछ नहीं......कुछ नहीं समझने लगा। मैं अभी जाता हूँ।"

कह कर यदुवंश लड़खड़ाता हुआ सीढ़ी उतर गया।

उसके बाद वह फिर गाँगुली बाबू के यहाँ नहीं गया। रेणु फिर ससुराल कब गई, उसने जानने की कोशिश भी नहीं की। एक बार गाँगुली बाबू आए भी तो उसने बहाना कर दिया।

"इम्तहान सिर पर है।"

और इम्तहान देकर वह फौरन पटना छोड़ कर घर चला गया। रेणु का अध्याय अपने जीवन से उसने सदा के लिये फाड़ कर फेंक दिया।

इन्टर के बाद उसकी पढ़ाई चली भी नहीं। उसकी शादी हो गई। पिता की मृत्यु के बाद वह रोजी के चक्कर में मारा-मारा फिरा। और अन्त में यहीं आकर बसेरा लिया। एक कार्यकर्ता, देश सेवक बन कर।

लेकिन एक बात है। बरसों के कालान्तर ने जब रेणु की चोट

को अच्छा कर दिया तब कभी-कभी वह सोचा करता है कि क्या उसने तब रेणु का प्रस्ताव न मान कर अच्छा किया था ?

इसका उत्तर अभी तक उसे नहीं मिल पाया है। लेकिन जाने क्यों हर बङ्गाली महिला के प्रति उसके मन में एक अजीब प्रकार का मोह पैदा हो गया है। वह हरेक में रेणु की छाया देखता है और रेणु के प्रति उसके मन का स्नेह उमड़ आने को बेचैन हो उठता है।

आज यदुवंश का सिर चक्कर खा रहा है। आठ साल पहले रेणु का भूत उसके सिर से उतरा था सो आज फिर उस पर सवार हो गया है। एक बार रेणु के कारण उसे पटना छोड़ना पड़ा था। यहाँ आकर उसने मुंह छिपाया था पर रेणु ने उसका यहाँ भी पीछा नहीं छोड़ा। अब वह क्या यहाँ से भी भाग जाये?

आज यदुवंश जीवन में एक सहारा खोज रहा था, पत्नी की मृत्यु से उसकी जिंदगी की नाव डगमगा गई थी और अब जैसे वह सहारे के स्थान पर भंवर में फँस गई है और तत्काल ही डूब जाना चाहती है।

लेकिन वह यों उसे डूबने न देगा।

बयासी

रेणु से वह अपने को दूर रखेगा। रेणु उसके जीवन में सदा ही प्रलय की आँधी बन कर आती है और उसके अस्त-व्यस्त जीवन को उड़ा देना चाहती है।

लेकिन इस बार वह आँधी को भी फेर देगा।

वह यह शहर छोड़ कर देहात में, दूर देहात में चला जायगा।

आकर महतो से उसने कहा—"महतो जी, मैंने निश्चय कर लिया है!"

"क्या निश्चय कर लिया है, दादा?"

"यही कि ऊँचडीह में ही मैं भी रहूंगा, तभी वहाँ का काम ठीक होगा!"

"यह निश्चय तो अति उत्तम है! हम लोगों का तो निश्चय ही बहुत भला होगा लेकिन यहाँ का काम भी तो रहेगा। यहाँ कैसे चलेगा?"

"यह तो शहर की बात है। कोई न कोई नया मंत्री बन जायगा। लेकिन हमें तो देहात में ही काम करना है।"

"खैर, यह सब हो जायगा! हाँ दादा, वहाँ मेमसाहब ने क्यों बुलवाया था?"

महतो ने प्रश्न कर दिया तो लगा कि दादा के प्राण पखेरू उड़ गये! कानों में साँय-साँय होने लगा! जिस स्थिति से वह अब तक कतराता रहा है आखिर वह स्थिति आ ही गई न! अब यदुवंश क्या करे? वह महतो से झूठ कहे क्या? और अगर झूठ न कहे तो सच भी कैसे कहे कि यह रेणु उसके अतीत की एक शर्मनाक

प्रतिमा है। उसके अतीत जीवन का एक ऐसा अध्याय है जो अगर कभी भी न खोला जाता तो अच्छा था लेकिन आज अचानक ही वह खुल गया है। यद्यपि यदुवंश अपनी आँखें बन्द ही किये रहेगा वह उसे फिर नहीं देखेगा—नहीं देखना चाहता ! कभी नहीं देखेगा।

उसे महतो से झूठ ही कहना पड़ेगा—वह झूठ कहेगा' उसने कहा, "वह, वह मेमसाहब जानना चाहती थीं कि इस जिले में काँग्रेस की क्या शक्ति है। यहाँ का वातावरण बहुत अधिक सरकार विरोधी तो नहीं है ?"

महतो के चेहरे पर थोड़ी हँसी खेल गई।

"लगता है साहब की जगह वे ही राज चलायेंगी ?"

'हाँ अजीब औरत है।' दादा ने कहकर जान छुड़ाई लेकिन महतो कहीं उसी बात को आगे खींचे इसलिये बोले, "लेकिन छोड़िये उसे। यह बताइये कि ऊँचडीह चलने की बात आप को कैसी लगी ? एक बात की दिक्कत मुझे दिखाई पड़ती थी कि चलें तो, लेकिन छोटू की पढ़ाई यहाँ अभी ही शुरू कराई थी।"

महतो जी क्षण भर गम्भीर बने रहे फिर बोले,

"उसका भी प्रबन्ध हो जायगा। अपने हो गाँव के वह देवकी नन्दन पंडित हैं न ! उनकी एक छोटी सी संस्कृत पाठशाला भी तो है। उन्हीं से कहेंगे कि छोटू को विशेषतौर से उसके स्कूल की ही किताबें पढ़ाया करें। अपने ही आदमी हैं। अच्छे कार्यकर्ता हैं अतः कोई चिन्ता की बात नहीं।"

दादा तनिक स्वस्थ हुए। यह भी प्रबन्ध हो जायगा फिर भला क्या कठिनाई है ? यहाँ से अब जल्दी से जल्दी ही टल जाना

पड़ेगा। यहाँ बहुत से संकट अब इकट्ठे हो गये हैं। रेणु अफसर की बीवी बनकर आ गई है। उसका डर बुरी तरह सिर पर सवार है। फिर अपना घर भी तो, जब से छोटू की भाभी मरी है जैसे काटने दौड़ता है। भूतों का घर हो गया है। वहाँ उसे डर लगता है। छोटू की भाभी याद आती है। वह याद आती है तो अपने किये तमाम पाप याद आ जाते हैं। उसकी दवा ठीक से नहीं की। उसे जीवन भर दुःखों से ढाँक रखा था—क्या-क्या कष्ट नहीं दिया और उसके साथ इस प्रकार के जो भी तमाम व्यवहार हुए क्या उन्हें पाप के अलावा कुछ और कहा जा सकता है ?

दादा जब भी यह सोचता है उसका जी घृणा से भर जाता है। अपने से ही उसे घृणा होने लगती है। वह अनेक रूपों से अपने को बार-बार धिक्कारता है। मन ही मन कितना पश्चाताप करता है—कौन जाने !

सो अब चाहे जैसे भी हो वह अवश्य ही यहाँ से चला जायेगा। जब तक रेणु यहाँ रहेगी वह कदापि यहाँ नहीं आवेगा—उसने महतो जी से कह दिया,

"महतो जी इसी सप्ताह हम चले चलेंगे। आप के साथ ही। बस कल छोटू के स्कूल जाकर जरा पूछ-पाछ लें और यहाँ कार्यालय का प्रबन्ध कर दें, बस !"

महतो जी तनिक आश्चर्य चकित थे कि आखिर दादा यहाँ से इतनी जल्दी क्यों भागना चाहते हैं ?

पाँच-सात दिन बाद रेणु के पास वापस आकर उसके अर्दली ने बताया कि यदुवंश बाबू दो तीन दिन पहले ही यहाँ से कहीं देहात चले गए। ठीक पता तो नहीं कि कहाँ गये लेकिन कांग्रेस आफिस वालों ने बताया कि शायद ऊँचडीह गये हैं और अब वहीं रहेंगे। वहाँ कोई आश्रम खोलेंगे।

"ऊँचडीह क्या यहाँ से दूर है?" रेणु ने चिन्तित होकर पूछा।

"हाँ, मेम साहब, वहाँ मोटर भी नहीं जाती। केवल बैलगाड़ी ही जा सकती है। रास्ता बिल्कुल ही ठीक नहीं है। वहाँ काँग्रेसियों का बड़ा जोर है। क्योंकि वहाँ जमींदार और किसानों में हमेशा ही झगड़ा लगा रहता है।"

छियासी

अर्दली से जो कुछ पता लगा उतना काफी था। उससे अधिक पता लग भी क्या सकता था ? उससे अधिक जानकर भी रेणु भला क्या करती ?

रेणु को तो सिर्फ इससे मतलब था कि दूसरे दिन आने का वादा करके भी यदुवंश नहीं आया और उस दिन उसे जो शक हुआ था कि शायद यदुवंश फिर न आये सो सच ही हुआ।

अब वह यदुवंश का पता लगाये भी क्यों ? उसे उस पर-पुरुष से क्या मतलब ? एक बार जब रेणु ने उसे अपना सर्वस्व मानकर जीवन में पदार्पण करने के लिये निमंत्रित किया था तब तो उसने कायरता दिखाई और उस दिन यहाँ मिलने पर भी वह ऐसा हो गया था जैसे किसी शेरनी से उसकी भेंट हो गई हो ?

उसके मुँह से अचानक निकल पड़ा।

"कायर, निकम्मा !"

ऊँचडीह में यदुवंश के आने से एक नई जिन्दगी फूट पड़ी है। वहाँ के सताये हुए किसानों ने समझा उनका एक रक्षक आ गया है, एक नेता आ गया है। अब उन पर जमींदार मनमाना अत्याचार नहीं करने पावेंगे। यदुवंश बहुत कर्मठ व्यक्ति जो है। वह बात-बात में आन्दोलन खड़ा कर देगा—सत्याग्रह ठान देगा। किसानों ने संतोष की साँस ली।

और जमींदारों ने भी संतोष की साँस ली। उनका विश्वास था कि वे किसानों पर तनिक भी जुल्म नहीं करते। पूरे गाँव में जो भी तीन चार जमींदार हैं वे सभी किसानों के हितचिन्तक हैं। वे जो भी करते हैं अपने और किसानों, दोनों की भलाई की बात

सोच कर। लेकिन यह जो सुंघनी महतो हैं न, ये ही बीच में कुछ ऐसा-वैसा किसानों को समझा देते हैं कि बना बनाया काम बिगड़ जाता है। अच्छा भी बुरा हो जाता है। उनका विश्वास है कि किसानों के बीच अपनी महतबई जमाये रखने के लिये ही यह तो गड़बड़ करते हैं नहीं तो किसान की जाति ही बहुत सीधी होती है। जन्म जन्मान्तर से किसानों और जमींदारों का जो सम्बन्ध चला आता है इसे यह नेता लोग ही अपने स्वार्थ के लिये बिगाड़े हुए हैं। उनका ख्याल है कि यदुवंश के आ जाने से अब महतो की महतबई नहीं चलेगी। महतो ही तो गाँव भर के सारे उत्पातों का कारण था। अब उससे बड़ा नेता यदुवंश आ गया है। वह शायद जमींदारों और किसानों के बीच बढ़ते हुए असन्तोष को रोक सके।

एक बात और है जिसके कारण जमींदारों को तनिक संतोष है। वह यह कि उन्होंने सुन रखा है कि यह यदुवंश जो नेता है उसके कारण शहर के सेठों और महाजनों को बहुत आराम था। वे शायद पैसे से इसकी मदद करते रहे हैं। सो वे भी ऐसा ही करेंगे। नेता के यहाँ खेती तो होती नहीं। इसी तरह तो काम चलता है। सो वे लोग अवश्य ही इसे अपने पक्ष में कर लेंगे। महतो के पास तो अपनी खेती, अपनी किसानी थी। उस पर इनका जादू चलता भी तो नहीं था।

इस प्रकार किसानों और जमींदारों, दोनों ही में काफी संतोष फैल गया है।

लेकिन दादा का यों अचानक स्थान परिवर्तन करना सरकार की आँखों में खटका। सरकार के गुप्तचरों ने इसे उसकी राजनीतिक

चाल बताया और यदुवंश के कार्यक्रमों पर खास निगरानी रखी जाने लगी।

ऊँचडीह में आकर यदुवंश ने अपने को अधिक शांतिपूर्ण वातावरण के बीच पाया। यहाँ हर समय वह काम में बझा रहता। कभी बेकार न बैठता जिसका फल यह होता कि उसे पत्नी की याद भी कम आती और रेणु का डर भी कम ही लगता। पत्नी की मृत्यु और रेणु का यों प्रकट होना दोनों ही उसे बड़ा अजीब सा लगा। जैसे इन दोनों घटनाओं के बीच वह पिस कर रह जायगा। दोनों ही घटनाओं को वह भुलाना चाहता है लेकिन एक भी घटना उसके मानसपट पर फीकी नहीं पड़ती, मिटने की कौन कहे। पत्नी से उसने जीवन भर का सहारा प्राप्त करने की आशा की थी जो उसे बेसहारा कर गई और रेणु से वह जितनी दूर भाग कर आ गया था आज फिर वह उतनी ही पास चली आई है। जिले का ही मामला है। कब तक वह अपने को उसके सामने जाने से रोकता रहेगा। कभी न कभी तो सामना हो ही जायगा फिर वह क्या करेगा? वह रेणु के सामने फिर इस रूप में नहीं जाना चाहता।

वह इस बात पर जितना भी सोचता उतना ही उसका मस्तिक एक उलझन में फँसता जाता।

यह सब क्यों हो रहा है!

वह अपने को किस तरह सम्हाले!

नब्बे

छोटू को तो उसने गाँव की संस्कृत पाठशाला में भरती करा दिया है। दिन भर तो वह वहां रहता है लेकिन उसकी पढ़ाई लिखाई का सिलसिला ठीक है नहीं। यह यदुवंश अनुभव करता है। छोटू जिस दिशा में बढ़ रहा है वह कदापि उचित नहीं है। घर की कोई व्यवस्था नहीं है। वह खुद पढ़ा नहीं पाता। संस्कृत के पंडित जी कितना पढ़ायेंगे, वह यह भी खूब जानता है। फिर गांव का यह वातावरण, जहां विद्या का टिकना ही कठिन है। फलस्वरूप छोटू की बदमाशी दिन प्रति दिन बढ़ती ही जा रही है। शहर में तो उससे भी तेज लड़के थे। उसके आगे इसकी इतनी ज्यादा नही चलती थी लेकिन गांव के सीधे सादे बच्चों के बीच अभी से ही वह नेता बन गया है। शहर से आ रहा है, कुछ इसका असर कुछ दूसरा असर कि वह दादा जैसे बड़े नेता का भाई है। कुछ इसके कारण कि सभी उससे स्नेह करते हैं, उसकी शेखी और शान बढ़ती जा रही है। यह उचित नहीं यदुवंश केवल इतना ही जानता है। आगे वह कुछ सोच भी नहीं पाता। इसका उपाय उसकी समझ में नहीं आता। बस यही सोच कर वह खामोश हो जाता। इसके आगे उसकी बुद्धि में विराम लग जाता।

और जहाँ यदुवंश की बुद्धि बेकाम होने लगती वहाँ वह फौरन ही दूसरी बात सोचने लगता। छोटू को लेकर जब वह आगे सोच नहीं पाता तो फौरन ही छोटू का ख्याल मन से निकाल देता है। जो होना होगा देखा जायगा। वर्तमान परिस्थिति में वह कुछ कर भी तो नहीं सकता।

यहाँ आए उसे अब महीना पूरा हो रहा है। धीरे-धीरे वह

इस गाँव से, मन से परिचित हो गया है। यहाँ वह रेणु को भूल सका है। अब उसे विश्वास है कि शायद जीवन शान्ति से बीते। इस शान्ति को कायम रखने के लिए उसे अपने को हर समय काम में बझाए रखना है।

एक दिन एक किसान आकर रोने लगा,

'दादा, अब तुम्हारे रहते भी यह जुल्म हो रहा है।'

'कैसा जुल्म ?'

'यही कि इस बार बलदेव सिंह जमींदार हमें जमीन नहीं जोतने दे रहा है।'

"महतो जी से तुमने इसकी चर्चा की ?"

"महतो जी आजकल आपके ही कहे पर हैं ? अगर आप हाथ नहीं देंगे तो इस बार मैं रहूंगा कैसे और मेरे बाल-बच्चे भूखों मर जायेंगे।"

दादा को लगा जैसे उसके कार्य करने का समय ही नहीं आया काम भी मिल गया है।

उसी दिन से दादा उस किसान के साथ लग गए और जब दादा लग ही गए तो भला वह काम सिद्ध भी क्यों न होता। बलदेव सिंह जमींदार पर दादा के व्यक्तित्व का कुछ ऐसा प्रभाव पड़ा कि उसने किसान से समझौता कर लिया।

दादा ने इसे अपनी विजय समझी। लेकिन वास्तविकता कुछ और ही थी। बलदेव सिंह ने इस समय तो समझौता कर लिया लेकिन बात को जरा बहुत बड़ा 'चढ़ा कर उसने अपने मित्र थानेदार तक पहुंचा दी। थानेदार जालिम सिंह अपने नाम के अनुसार

ही मन से भी जालिम ही था। उसकी और बलदेव की मित्रता थी। बलदेव सिंह के सहयोग से वह दादा की नसें तोड़कर अपनी कार्यकुशलता का परिचय देना चाहता था कि उसने ऊँचडीह से कांग्रेस की जड़ उखाड़ दी।

और इसमें वह किसी हद तक यों सफल भी हुआ।

हुआ यह कि दादा को यहाँ आए काफी अरसा हो चुका था। उसपर गाँव वालों का विश्वास भी जम रहा था। अतः दादा ने सोचा कि गांव वालों के सहयोग से कुछ ऐसा भी कार्य किया जाय तो अच्छा हो जिससे गांव में पूर्ण रूप से जागरण हो सके। उसने कल्पना की—एक छोटा सा स्कूल खोला जाय, एक आश्रम खोला जाय, एक सेवा संघ खोला जाय।

गांव इससे खिल उठेगा।

दादा का यश वायुमंडल में फैलेगा।

सर्वप्रथम आश्रम की ही योजना सामने रखी गई। गाँव वालों ने पूरी तरह सहयोग दिया, और एक सदा परती पड़ी रहने वाली बंजर जमीन पर आश्रम की कुटिया खड़ी हो गई। खर, बांस और खूँटों की कमी नहीं थी—गांव वालों ने देखते ही देखते जुटा दिया और देखते ही देखते आश्रम बन गया। एक सफेद बड़े कपड़े पर लिख कर टांग दिया गया—राष्ट्रीय आश्रम।

और आश्रम के भीतर गांधी जी का एक चित्र कलेंडर से काट कर दफ्ती पर चिपका कर लटका दिया गया। यह आश्रम होगा गाँव वालों के लिए मिलन स्थल और दादा का निवास स्थान। तय

हुआ कि एक सप्ताह बाद इसका नियमपूर्वक उद्‌घाटन समारोह हो, छोटी सी सभा हो और कम से कम बारह घंटे का अखंड चर्खा यज्ञ ! दादा ने एक कार्यकर्ता को पत्र देकर शहर भेजा और दो चरखे मँगवा लिए। चरखा गांव में आया तो गांव वालों को लगा कि उनका बहुत बड़ा रक्षक आ गया। सभी उन चरखों को आदर और श्रद्धा की निगाह से देखते और गांव भर के बच्चे उसे बड़े कौतुहल से निहारते। यह चरखा कैसे चलेगा ? इससे क्या होगा ? इसके चलते ही गांधी बाबा का स्वराज कैसे आ जाएगा ?

गाँव में नया जीवन झूमने लगा। गांव वाले अपनी नसों में एक प्रकार के नए रक्त का स्पंदन सुनने लगे। और गांव के जमींदार ! वे डरते हृदय से सब कुछ देख रहे थे। उन्हें लग रहा था कि आश्रम के रूप में यह जो कुछ निर्माण हो रहा है वह उनके विनाश का कोई स्वरूप प्रकट हो रहा है। वे लोग चुपचाप गांव में होने वाली इस प्रगति को अनेक रूपों में अनेक प्रकार की बातें बना कर थानेदार जालिम सिंह को पहुंचाते और उससे प्रार्थना करते कि अगर किसी तरह बारूद के इस महल को वे बनने से रोक सकें तो गांव का बड़ा भला हो।

और जालिम सिंह भी कोई ऐसे अवसर की ताकझांक में था कि वह ऊँचडीह में एक बार लालपगड़ी की ताकत दिखा सके। अन्त में वह दिन आ ही पहुंचा।

आज आश्रम का उद्‌घाटन होगा।

कार्यक्रम यह है :—

प्रातःकाल : चरखा यज्ञ प्रारम्भ और झंडा फहराया जायगा।

चौरानबे

दिन भर : चरखा चलता रहेगा ।

शाम को : सभा, भाषण ।

सो कार्यक्रम के अनुसार ही सर्वप्रथम चरखा यज्ञ प्रारम्भ हुआ । गाँव के लोग कुछ तो गम्भीर कुछ चकित विस्मित से और बच्चे बड़े ही कौतुहल से वहां भीड़ लगाए थे जहां दोनों चरखे रखे थे । दादा ने पूजा करने जाने को तैयार भक्त की तरह आकर विधिपूर्वक चरखा चलाना शुरू किया और दूसरा चरखा श्री महतो ने अपनाया । और शायद गांव में किसी को चरखा चलाना नहीं आता था लेकिन सबों के चेहरे पर धैर्य का यह भाव अवश्य ही था कि अगर गांव में यह चरखे रह गए तो एक-एक करके सभी अवश्य ही सीख लेंगे।

चर्खा जनता की जागृति का एक प्रतीक था और जब अपने घर में प्रतीक की स्थापना हो गई है तो जागृति के आने में भला क्य देरी लगेगी ?

थोड़ी देर चरखा से काफी महीन सूत कातकर दादा ने गाँव वालों पर काफी प्रभाव डाला । फिर वे झंडे के फहराए जाने के कार्यक्रम के लिए उठ खड़े हुए । लेकिन महतो जी चरखा चलाते ही रहे । महतो जी की चरखे की आदत न थी और इसीलिए शायद बारबार उनका सूत टूट जाता था । उन्हें इससे बड़ी झुंझलाहट हो रही थी लेकिन दादा का आदेश था कि चरखा शाम तक चलता ही रहे, बीच में क्षण भर को बन्द न हो, नहीं तो यज्ञ खण्डित हो जायगा, इसीलिए वे किसी तरह बार बार अपना टूटा सूत जोड़ते रहे और चरखा चलता रहा ।

गांव वाले झंडा फहराए जाने वाले स्थल की ओर मुड़े। आज गांव भर में अजीब प्रकार का उत्साह का वातावरण उपस्थित हो गया था। बच्चे जैसे किसी मेले का सुख प्राप्त कर रहे हों। चारों ओर उछलते फिर रहे थे।

और दादा! आज दादा में जाने कहां से और उत्साह आ गया था। भूत की तरह कामों में जुटे थे।

उनके सामने एक स्वप्न साकार हो रहा था। यह आश्रम बनेगा। गांव में बच्चों के पढ़ने को पाठशाला होगी। रोगियों की सेवा के लिए सेवाश्रम होगा। कार्यकर्ताओं के रहने ठहरने के लिए आश्रम होगा। किसानों के सुख-दुख में संगठित होकर इसी आश्रम से सारे कार्यक्रम प्रसारित किए जायेंगे। यह आश्रम बिलकुल उसी तरह काम करेगा जैसे गांधी जी का आश्रम काम करता है। इतनी बड़ी कल्पना आज साकार हो रही थी। गाँव वालों के उत्साह में कोई कमी नजर नहीं आती इससे यह भी विश्वास है कि आश्रम ठीक से चल भी सकेगा।

आश्रम के नाम की अब तक समस्या थी लेकिन अब नाम भी तय हो गया, राष्ट्रीय गांधी आश्रम।

इससे अच्छा दूसरा नाम हो भी नहीं सकता था। आज छोटू भी प्रसन्न लटटू की तरह नाचता घूम रहा था उसे तो लग रहा था जैसे इतने तमाम लोग मिल-जुल कर उसी का अपना ही कोई उत्सव मना रहे हों। दादा आज ही जैसे उसकी नजरों में बड़ा नेता हो गया हो। जैसे सभी की आंखें दादा की ओर ही उठी रहती थीं। लेकिन इन तमाम उत्साह और खुशी के बीच भी छोटू कुछ बुझा-बुझा

सा था उसे सब चीजों के बीच जो कमी लग रही थी वह यह कि उस की भाभी इस समय नहीं थी, न उसका घर था। जहां भाभी से जा जाकर वह आज के सारे उत्सव का वर्णन करता। वह बालक अपनी तमाम खुशी अपने आप सम्हाल नहीं पा रहा था। उसे आज भाभी की याद सता रही थी जो उसकी एकमात्र मूक श्रोता बन कर उसकी खुशी में भाग ले पाती।

लेकिन छोटू के पास आज चुपचाप अपना संताप आप ही सह लेने के सिवा था भी क्या ?

लोग चर्खा यज्ञ के स्थान पर खड़े थे। कुछ झंडे के फहराए जाने के मैदान के पास चले गए थे। लेकिन जो लोग चर्खा के पास खड़े थे वे इसलिए भी खड़े थे कि वहां बैठने का कोई साधन न था नहीं तो बैठ भी जाते।

तभी लोगों ने देखा कि कोई व्यक्ति सिर पर पुवाल का बहुत बड़ा बोझ लिए चर्खा की ओर बढ़ता आ रहा था। पुवाल ढीला होकर उसके चेहरे पर भी इस तरह छा गया था कि कोई भी पह-चान न सका कि यह कौन व्यक्ति है।

जब पुवाल लेकर वह बहुत पास आ गया तो लोगों ने प्रश्न करना शुरू कर दिया कि क्यों ला रहा है यहां ? किसी ने व्यंग भी किया—अरे भाई ठाकुर साहब की गाय यहां नहीं बंधती।

लेकिन महतो समझ गए थे। उन्होंने चरखा रोक कर कहा। कुछ डांट के स्वर में—'तुम लोग कुछ काम नहीं करते न किसी को करने देते हो। दादा ने भेजा होगा। यहां बिछा दिया जाय तो लोग बैठ सकेंगे। इधर लाओ भाई, इधर !'

तब तक पुवाल वाले ने लाकर पुवाल का गट्ठर पटका तो जैसे सभी उपस्थित व्यक्तियों को सांप सूँघ गया। यह क्या ? यह क्या अनर्थ !

खुद दादा ही पुवाल लादे चले आए ! पुवाल को पटक कर दादा ने लम्बी सांस खींची। थक गए थे। उन्होंने देखा कि लोगों को बैठने का ठीक प्रबन्ध नहीं सो खुद ही पुवाल लाद कर ले आए। सच्चा सेवक खुद काम करता है किसी से कहता नहीं। जो लोग अभी डांट रहे थे, व्यंग कर रहे थे। एक-एक करके शर्म के मारे खिसकने लगे।

दादा के सिर पर से बोझ गिरा और महतो चौंक कर उठ खड़े हुए, "यह क्या ! आप ही ले आए ? इतने लोग थे यहाँ। किसी को कह देते। यहाँ के लोग तो मूर्ख हैं कि अपने से कुछ करते ही नहीं और देखकर भी नहीं शर्माते !"

'लेकिन आप लोग इतना नाराज क्यों हो रहे हैं ? आइए इसे बिछा दिया जाय ताकि बैठने को आराम रहे।' दादा ने कहा और पुवाल फैलाने लगे। फिर तो सबों ने ही झेंप मिटाने को हाथ लगा दिया और पुवाल झटपट बिछा दिया गया।

लेकिन आज की इस बात से दादा लोगों की नजर में बहुत ऊँचे उठ गए। दादा सच्चे सेवक हैं, सच्चे कार्यकर्ता हैं।

लोगों के साथ महतो भी भावावेश में चर्खा छोड़कर उठ खड़े हुए। सच तो यह है दादा के पुवाल ढोकर लाने से सबसे अधिक कष्ट महतो के मन में ही हो रहा था। वे इस प्रकार झेंप रहे थे जैसे उन्हें अपने गाँव पर लज्जा आ रही हो। दादा क्या समझेंगे

कि उसके गांव ऊँचडीह के लोग कितने काहिल, कितने बुरे हैं।

लेकिन दादा को अनजाने ही जो श्रेय, प्रेम और श्रद्धा मिल गई इस पर वे मन ही मन पुलकित हो रहे थे। उन्हें अगर मालूम होता कि केवल पुवाल लाने पर गाँव वालों पर इतना प्रभाव पड़ता है तब तो वे पहाड़ लाद लाते। तब तो गाँव वाले उसके सामने सिर ही न उठा पाते।

पुवाल बिछा कर दादा दूसरी ओर बढ़े। अब झंडा फहराने का समय हो गया था। लेकिन तभी ही उन्हें ख्याल आया कि महतो जी ने भी जोश में चरखा रोक दिया था। अब तो यज्ञ खंडित हो गया। सो बोले, "महतो जी, आपने चरखा क्यों रोक दिया ? अब तो यज्ञ खंडित हो गया न ! अखंड यज्ञ में कभी भी चरखा नहीं रुकना चाहिए।"

महतो अपराधी की तरह खड़े रहे।

'खैर, यह अशुभ तो बहुत हुआ। पर जाने दीजिए। झण्डा फहरा कर फिर हम दोनों साथ-साथ कातेंगे।'

महतो को तनिक सांत्वना मिली। अपराध तो उन्होंने बहुत बड़ा किया फिर भी दादा के साथ हो लिए।

तब तक झण्डा के लिए बाँस गाड़ा जा चुका था। रस्सी लटक रही थी। दादा ने सारा प्रबन्ध पहले ही कर दिया था। दौड़ कर एक तेज लड़का महतो जी के यहाँ से झण्डा ले आया और दादा ने उसे रस्सी में बांध दिया। फिर दादा ने सभी उपस्थित लोगों को समझाया कि यों एक अर्ध गोलाई, में खड़े हों। झण्डा फहराए जाने से लेकर 'झण्डा ऊँचा रहे हमारा...' के गान तक 'सावधान' की.

मुद्रा में खड़े रहें फिर झण्डे को प्रणाम करके बिदा होंगे। उसके बाद नारे लगाए जायेंगे।

भारत माता की जै!

महात्मा गांधी की जै।

अंग्रेजी राज नाश हो।

किसान राज कायम हो!

दादा ने बता दिया कि नारे के समय वे कितना कहेंगे और लोग कितना कहेंगे।

लोग सब समझ गए। जितना दादा ने समझाया उतना सब वे लोग समझ गए।

झण्डा बाँधकर दादा ने शुरू किया। बाँस के एक तरफ दादा खड़े हो गए और एक तरफ महतो जी। दोनों ही तो गाँव के नेता थे न!

बाकी लोग अर्ध गोलाई में।

दादा ने आँखों के इशारे से महतो जी से कुछ कहा कि उत्तर में महतो जी तो जैसे बिछ गए। दाँत दिखाकर बोले, "नहीं दादा आपके रहते मैं यह नहीं कर सकता!'

'अच्छा!' कहकर दादा ने तनिक संकोच के साथ झण्डा ऊपर चढ़ाने वाली रस्सी खींचना शुरू किया और हवा की गति के मुताबिक हल्के से हिलता हुआ झण्डा ऊपर चढ़ने लगा।

लोगो की निगाहें ऊपर थीं। झण्डा चढ़ रहा था। इस साज-सजा धूमधाम से गाँव में पहली बार झण्डा फहराया जा रहा था।

गाँव में, ऊँचडीह गाँव में एक नया जीवन जन्म ले रहा था।

इसका सारा श्रेय श्री यदुवंश अर्थात् दादा को था।

कि तभी दादा चीख उठे, 'यह क्या महतो जी, अनर्थ हो गया झण्डा तो उल्टा बँध गया है। देखते नहीं। हरा रंग ऊपर हो गया और केसरिया रंग नीचे। सफेद रंग पर बना चर्खा भी उल्टा हो गया है।'

सबों ने यह त्रुटि देखी और सबों का जी धड़कने लगा। यह बड़ा अनर्थ हुआ।

लोग तो सभी परेशान हो गए थे। एक आशंका से उनका जी काँपने लगा। झण्डा उल्टा लगना अशुभ है।

दादा ने झटपट दूसरी रस्सी खींच कर झण्डा उतारा और उसे फिर खोल कर सीधा बाँधने लगे।

महतो जी ने सांत्वना देने की तरह, कहा, 'जल्दी में काम बिगड़ होजाता है।'

'यही नहीं महतो जी, आज यह सब बड़ा अशुभ हो रहा है। चरखा का यज्ञ अधूरा रह गया और अब झण्डा भी उल्टा लग गया। यह सब वहुत अशुभ है।'

कहते-कहते दादा की आवाज यों कांप गई जैसे इस अनर्थ का भोग भोगना ही पड़ेगा।

किसी तरह झण्डा ठीक करके फिर ऊँचा किया गया। इस बार झण्डा ऊपर चढ़ने लगा कि लोगों ने सन्तोष से देखा कि इस बार ठीक है। केसरिया रंग ही ऊपर है।

इस बार ठीक ही हुआ? अब कोई अशुभ नहीं है लेकिन दादा के मन में जो अशुभ की आशंका बैठ गई थी वह भला किस

प्रकार निकलती। मन ही मन जाने यह क्यों डरने लगा था। अब क्या कोई नई मुसीबत आने लगी है ? झण्डे का, चरखे का अपमान, छोटी बात नहीं। लेकिन इसके लिए वह कर भी क्या सकता था !

इसके बाद झण्डा ठीक तरह फहरा कर दादा ने झण्डा गान गाया। 'झण्डा ऊँचा रहे हमारा..................।'

एक-एक कड़ी दादा गाते और उसे उपस्थित सभी एक राय से दुहराते।

गाना गाते समय दादा को हार्दिक प्रसन्नता थी कि आज सारा गाँव उन्हीं का राग गा रहा है और गाँव वाले प्रसन्न थे कि दादा का राग वे अच्छी तरह गा लेते हैं।

गाना समाप्त करके झण्डे को प्रणाम किया गया। फिर दादा ने नारे लगाए—

'भारत की जै।' जै के साथ गाँव वाले भी चिल्लाए।

'महात्मा गाँधी को......जै।' गाँव वालों ने नारा लगाया।

'अंग्रेजी राज......!' गाँव वालों ने पूरा किया, 'जिन्दाबाद।'

'गलत है, गलत है !' दादा चीख पड़े।' मैंने कहा था न कि जब मैं 'अंग्रेजी राज' कहूं तो आप लोग 'नाश हो' कहें। और जब मैं कहूं 'किसान राज' तो आप लोग 'ज़िन्दाबाद कहें। इस बार उल्टा कह गए थे आप लोग !'

गाँव वालों ने एक दूसरे को देखा। इस प्रकार गलती नहीं होना चाहिए। सभी थोड़ा थोड़ा झेंपे !

दादा ने सतर्क होकर फिर नारे लगवाए—

इस बार गाँव वालों ने ठीक ही नारे लगाए।

'अंग्रेजी राज······नाश हो !'

'किसान राज······जिन्दाबाद !'

इतना उत्सव तो ठीक तरह हो गया।

दादा ने सब का नेतृत्व किया। महतो को कहीं भी प्रधानता नहीं मिली। यहाँ तक कि नारे भी दादा ने ही लगवाए। महतो मन में कुछ खीझे हुए थे। खीझ और तनिक चापलूसी की भावना से भर कर अन्त में उन्होंने अपनी ओर से नारा लगाया।

'यदुवंश बाबू की···' गाँव वाले मशीन की तरह बोल उठे 'जै।'

यदुवंश को यह परिहास लगा। झेंपकर महतो से बोले, 'यह सब क्या महतो जी !'

'हमारे तो आप ही नेता हैं न ! आपकी भी जै न बोलूँ क्या ?' महतो ने कहकर यश कमाया।

तभी भीड़ के पीछे से एकाएक शोर उठ खड़ा हुआ। लोगों ने फौरन ही उलट कर देखा। जालिम सिंह दारोगा दस बारह सिपाहियों के साथ इसी ओर भागा आ रहा था। उसके पीछे कुछ गाँव के लोग भी थे और दो तीन जमींदार भी थे।

गाँव वाले तो इतना डर गए उस जालिम सिंह की छाया देखते ही कि कुछ न पूछिए। उनके तो होश उड़ गए। वे कुछ न समझे लेकिन दादा ने समझ लिया कि भविष्य क्या है।

जालिम सिंह ने आकर भीड़ को धक्का दिया और अपने सिपाहियों के साथ आकर दादा के सामने खड़े होकर रोब और शान में चिल्ला कर कहा,

'यह झण्डा क्यों लगाया, किसने लगाया ?'

दादा का जी भी डर रहा था लेकिन नेतागीरी की शपथ जो थी। वे कमजोरी दिखायेंगे तो गाँव वालों की दृष्टि में गिर जायेंगे। इसीलिए बहुत सम्हाल कर बोले, मैंने लगाया !'

दारोगा फिर चीखा, 'जानते हैं बिना सरकार से आज्ञा लिए न तो झण्डा लगा सकते हो न सभा कर सकते हो। समझे !'

दादा समझ गए कि क्या होने वाला है।

वे बोले, "ऐसा कानून तो मुझे नहीं मालूम ! और कोई बुरा काम भी तो नहीं है कि आप यों नाराज हो रहे हैं।'

'बुरा काम तो मैं बाद में बताऊँगा। पहले आप इस झण्डे को हटाइए यहाँ से ! यह सरकार की जमीन है। चाहे जो भी झण्डा हर जगह नहीं लग सकता। समझे। हटाइए यहाँ से नहीं मैं अभी उखड़वा दूँगा।'

दादा के होश उड़ गए। अब क्या होगा। महतो जी बीच बचाव करके दारोगा को समझाना चाहते थे। और गाँव वालों ने बात का यह रुख देखा तो एक-एक करके सभी खिसक गये। गाँव वाले जालिमसिंह को खूब जानते थे। यह भी जानते थे कि यह अब झण्डा उखड़वा कर ही रहेगा। और जो भी इस बीच में पड़ेगा उसकी खबर भी लेगा।'

गाँव वाले भाग गए। वहाँ सिपाहियों, दारोगा और महतो व दादा के सिवा कोई न था। दारोगा के पीछे खड़े थे बलदेव सिंह और उनके साथी। यह सब देखकर दादा को भी जोश आ गया।

'यह झण्डा तो नहीं उतारा जा सकता।

दारोगा ने अपने सिपाहियों को कहा, 'पकड़ ले चलो इन्हें !'

इस वाक्य पर महतो जरा पीछे हट गए। वे इसके लिए तैयार न थे। दादा को सिपाहियों ने दोनों ओर से पकड़ लिया।

'चलिए थाने पर!' दारोगा ने कहा और घृणा से झण्डे की ओर देखकर घूम पड़ा।

दादा ने देखा, इस समय कुछ भी बोलने से यहाँ खून खराब हो जाएगा। अतः चुपचाप वे सिपाहियों के साथ चले गए।

गाँव में जितना ही उत्साह छाया था सुबह, अब उतनी ही उदासी उतना ही भय छा गया।

महतो ने दादा के जाने पर मन में सोचा, झण्डा उल्टा लगाया था, चरखा यज्ञ खंडित हो गया! इसी सब का यह फल है।

दादा और महतो का अब तक का गाँव वालों पर का प्रभाव अब आतङ्क में बदल गया।

दादा के जाते समय छोटू रोने लगा था। महतो ने उसे अपने से चिपका कर समझाया, 'रोओ मत छोटू, दादा शाम तक आ जायेंगे। तब तक तुम मेरे साथ रहना।''

दादा फिर उस दिन नहीं लौटे।

छोटू को महतो समझाते ही रहे।

दादा को पुलिस वालों पर हमला करने के अपराध में तीन मास की कैद की सजा हुई।

दादा पकड़ लिये गए ।

गाँव और शहर में दोनों जगह यह खबर हवा की तरह फैल गई ।

छोटू को लगा कि भाभी की तरह दादा का स्नेह साया भी उस पर से उठ गया । छोटा सा बालक दुःखों की चोट सहते-सहते काफी अभ्यस्त हो गया था । यह नई चोट भी वह किसी प्रकार सह गया । यों देखने को तो महतो जी ही उसके आँसू पोंछने को काफी थे ।

दादा के गिरफ्तारी की खबर ऊपर के नेताओं को भी भेज दी गई ।

एक सौ छः

महतो जी ने शहर के विश्वनाथ प्रसाद मुख्तार को दादा का मुकदमा लड़ने को तय किया ।

लेकिन दादा का जी काँप रहा था कि मुकदमा अवश्य ही एस० डी० ओ० के यहाँ होगा और यह बंगाली एस० डी० ओ० कहीं उसे पहचान न जाए और कहीं रेणु को पता लग जाए और वह जेल में ही मिलने आ जाये तब !

यदुवंश मन ही मन मना रहा था कि किसी प्रकार उसके मुकदमें के पूर्व ही अगर इस एस० डी० ओ० की बदली हो जाए तो अच्छा हो ।

वह किसी रूप में भी रेणु को मुँह नहीं दिखाना चाहता था ।

वह तो गाँव गया था कि आश्रम बनाकर वहाँ शाँति से रहेगा । पर यह क्या से क्या हो गया !

सारा सपना टूट गया ।

पकड़े जाने और जेल जाने का सिलसिला जो एक बार शुरू हुआ तो वह बराबर चलता ही रहा।

दादा तब से अब तक तीन बार जेल गए और आए। छोटी-बातों पर पकड़-धकड़ होती रही।

जब-जब दादा जेल गए और आए उनका स्थान जनता की दृष्टि में ऊँचा होता गया। वे अब ऊँचडीह ही नहीं, शहर और जिले के भी एकमात्र नेता हैं।

जनता किसी को नेता और शुभचिन्तक मानने की एक ही कसौटी रखती है कि जनता ही के लिए वह कितनी बार जेल गया, कष्ट उठाया।

एक सौ आठ

यदुवंश तीन बार जेल हो आए थे।

जमाना भी बदल गया था। काँग्रेसी नेताओं का भविष्य स्पष्ट नजर आ रहा था। दादा भी अब नेतागीरी में उस जिले में एक-छत्र राज्य कर रहे थे। जनता को उन पर विश्वास भी था।

लेकिन यदुवंश का स्वरूप अब पहले से कुछ बदल गया था, स्थिति भी जरा ऊँची हो गई थी।

शहर में किराए का एक मकान ले लिया है। पैंतिस रुपये किराए का यह मकान सड़क के किनारे अच्छा खासा है। दादा की गिनती भी अब बुजुर्गों में होने लगी है। शहर के छोटे-बड़े मसले पर लोग उनकी राय लेते हैं, मदद लेते हैं। शहर में किसी के घर के सामने मरी बिल्ली पड़ी है जिसे म्युनिसिपैलिटी वाले नहीं उठवाते, उसके उठवाने के लिए दादा ही तो चेयरमैन को चिट्ठी लिखेंगे। और अगर किसी का लड़का स्कूल में फेल हो गया है तब भी दादा हेड मास्टर से पास कर देने की सिफारिश करेंगे।

यदुवंश जब यहाँ आए थे और कांग्रेस आफिस के पिछले भाग में रहते थे तब से आज तक में बहुत अन्तर आ गया है। एक युग भी तो बीता है! और दादा के सेवा कार्यों का सारा सिल-सिला और प्रगति शहर के प्रत्येक व्यक्ति ने देखा है। इसलिए दादा पर सबों का भरोसा है। प्रत्येक व्यक्ति हर बड़े-छोटे कामों के लिए दादा को ही याद करता है।

दादा के मकान के बाहर बड़ा सा बरामदा है। वहीं दादा अपनी बैठक जमाते हैं। दो तख्त हैं और पाँच सात कुर्सियाँ। एक

तख्त पर दादा बैठते हैं और उनके चारों ओर वे लोग जो दादा से काम कराने आते हैं।

उनके बीच बैठकर दादा सरपंच की तरह शोभित होते हैं।

दादा की कीर्ति दिन प्रति दिन बढ़ रही है।

और उसी बरामदे के एक कोने पर जो छोटा कमरा है वह छोटू का है। छोटू अब पहले की तरह नहीं है। वह भी बड़ा हो गया है। स्थानीय जिला स्कूल के आठवें दर्जे में पढ़ता है। दिमाग उसका तेज है। जो एक बार मन लगाकर सुन लेता है, समझ लेता है, वह उसे हमेशा के लिए याद हो जाता है। परन्तु पढ़ने में उसका मन नहीं लगता। घर में जब तक रहेगा, पढ़ेगा नहीं। पढ़ने बैठेगा तो बाहर बरामदे में दादा से होने वाली अन्य लोगों की अनेक विषयों पर बातें सुन सुनकर उसी पर मनन करेगा। स्कूल में शरारत और लड़ाई झगड़े के इतने प्रोग्राम रहते हैं कि उनसे छुट्टी ही नहीं मिलती। अपने स्कूल का वह खेलों का कैपटन है। इससे उसके खिलाड़ी होने के कारण सभी अध्यापक उसे जरा मानते हैं। फिर वह दादा का ही तो भाई है। यह सब कुछ ऐसा है जिससे बिना पढ़े ही वह पास होता जाता है।

दादा का ही जीवन उसे आदर्श जीवन लगता है। और साथियों के पिता या भाई किसी न किसी दफ्तर में काम करते या कोई न कोई रोजगार। लेकिन उसके दादा सबसे भिन्न हैं। सुबह से शाम तक दूसरों का ही काम करते रहते हैं। उन्हें सभी कितनी प्रतिष्ठा, कितनी इज्जत देते हैं। वे लोगों से जो कुछ बातें करते हैं, छोटू खूब मन लगाकर सुनता है। कभी दादा न रहे तो वह लोगों

से वैसी ही बात करने में पूर्ण सफल होगा, ऐसी उसकी धारणा है।

घर पर दादा ने एक देहाती नौकर रख लिया है जो उल्टा-सीधा खाना पका देता है। वह दादा का व्यक्तिगत सेवक है। वही उनके कपड़ों का, सब बातों का प्रबन्ध रखता है।

दादा अपने जीवन से पूर्णरूप से सन्तुष्ट हैं। अब पहले जैसी विपन्नता नहीं है, विपन्नता नहीं है तो मानसिक अशान्ति भी नहीं है। मानसिक अशान्ति नहीं रहती तो काम में मन लगता है। काम में मन लगता है तो दूसरों का भला होता है। दूसरों का भला है तो उसका यश फैलता है। यश फैलता है तो वह नेता माना जाता है।

दादा अपने बारे में अधिक नहीं सोचते। उन्हें तो दूसरों के साथ ही हमेशा दूसरों के काम करने में व्यस्त रहने में ही आनन्द है। लेकिन दिन भर के काम से जब वे थक कर रात को खाना खाकर खाट पर लेटते, तो छोटू को पुकार लेते। छोटू आकर दादा के पाँव दबाता। कभी-कभी दादा स्कूल की पढ़ाई आदि की चर्चा कर लेते। और छोटू सदा यही बताता कि वह काफी तेज है अपने क्लास में। दादा उससे सन्तुष्ट हो जाते। उन्हें जब झपकी आने लगती तो सोता समझ छोटू अपने कमरे में अपनी सदा ही बिछी रहने वाली खाट पर सो रहता।

दादा का नौकर उसी के कमरे में सोता था, उसकी खाट के पास ही जमीन पर कम्बल बिछा कर।

लेकिन दादा को सचमुच काफी देर तक नींद न आती। बार-बार झपकी लगकर उचट जाती। उसे बहुत परेशानी रहती है इस बात से। रह-रह कर उन्हें रात भर पत्नी की ही याद आती रहती। दादा यही सोचते—काश, उनकी पत्नी अब तक जीवित रहती! अब जब हर प्रकार आराम है, उसे सुख मिलता। जीवन भी उसका इतना नीरस न रहता! जीवन में आज वह सरसता ला सकता था। पत्नी को बता सकता था कि वह कितना योग्य पति है। उसे वह कितना प्यार कर सकता है, कितना स्नेह दे सकता है। उसके सिर में दर्द हो तो वह सिविल सार्जन बुला सकता है। उसकी सेवा में चौबीस घंटे के लिए दाई रख सकता है! लेकिन भगवान को उसका सुख मंजूर नहीं था शायद इसीलिए उसे उसके जीवन के काले दिनों में ही उठा लिया। नहीं तो वह भी कुछ करके दिखा देता।

दादा को रात भर लगता जैसे कमरे की दीवारों पर उसकी पत्नी की आकृति सजीव हो हो उठती है। वह दादा को एक टक देखती है! दादा घबड़ा-घबड़ा उठते हैं, फिर वह आकृति मिट जाती है। दादा अपना यह दुख किससे बतावें! छोटू छोटा है। बाकी सभी लोग पराए हैं।

एक रात बहुत व्यथित थे दादा, तब उन्होंने सोचा! काश कि वह रेणु को ही अपना सके होते! तब रेणु को अपने से दूर करके उन्होंने अच्छा नहीं किया। रेणु से अगर वह शादी करने को कटिबद्ध हो जाता तो क्या गाँगुली बाबू उसे रोक पाते? रेणु खुद भी तैयार थी। फिर भला कैसे कोई रोकता। उस समय थोड़ी सी

भावुकता में वह बह गया था नहीं तो अगर वह दिल कड़ा करके शादी कर ही लेता तो निश्चय ही आज उसका जीवन दूसरा होता। उसने अनेक गृहस्थ परिवार देखे हैं लेकिन बंगाली गृहस्थ की तरह प्रसन्न और खुश उसने किसी को नहीं देखा। उसका ध्रुव विश्वास है कि बंगालिन महिला जितनी खूबी से गृहस्थी चलाती हैं उतनी खूबी किसी अन्य में नहीं होती। और अगर वह रेणु से ब्याह कर लेता तो आज उसके गृहस्थी की गृहिणी एक बंगालिन होती और आज उसका घर कितना खुशहाल रहता। वह, उसका छोटा सा घर, सजी हुई गृहस्थी और उसकी गृहिणी रेणु !

जीवन क्या से क्या हो जाता !

लेकिन यह सब सोचना बेकार है। जब जीवन की एक भूल इतनी भयानक हो सकती है कि जीवन भर पछताने के सिवा कुछ हाथ न आवे तो उस पर अधिक सोचना भी तो बेकार ही है। अधिक सोचकर मन को कष्ट देने से, तड़पाने से क्या मतलब !

एक बार महतो जी ने ही तो कहा था कि दादा को दूसरी शादी कर लेनी चाहिए। तब वह महतो से कुछ कह न पाए थे लेकिन अगर किसी बंगाली लड़की से रिश्ता हो सके तो आज फिर इतनी देर में भी वह जीवन का नया अध्याय शुरू कर सकता है।

काश कि रेणु फिर किसी तरह उसकी हो पाती ?

लेकिन दादा से कौन बतावे कि समय के साथ ही सारी बातें भी बदल जाती हैं।

दो साल किसी तरह बीते।

छोटू अब दसवें दरजे में आ गया है। उसकी बुद्धि तीव्र हुई है। इस बार अगर वह पास हो गया तो वह मैट्रिक पास हो जायेगा। फिर कालेज का विद्यार्थी बनने का सौभाग्य मिलेगा।

इस चेतना से वह अपनी पढ़ाई के प्रति बहुत सतर्क हो गया है। वह अब खेल-कूद से जरा दूर हटकर पढ़ने ही में अधिक समय लगाता है।

लेकिन एक ऐसी घटना घटी कि छोटू का सब क्रम ही टूट गया। दादा कांग्रेस की महासमिति की बैठक में बम्बई गये थे। वहीं गांधी जी गिरफ्तार कर लिये गये। दादा अपने शहर के लिए भागे

लेकिन रास्ते में ही पकड़ लिए गये !

केवल इसकी सूचना भर ही छोटू को मिली।

बाद में उसे समाचारपत्रों से ज्ञात हुआ कि देश में आन्दोलन शुरू हो गया है। उसके स्कूल में भी हड़ताल हो गई। सारी चीजें उसे किसी बड़े चक्कर में घूमती नजर आईं।

छोटू क्या करे, वह समझ न पाया। दादा ने उसे कुछ समझाया नहीं अपना कर्त्तव्य उसे मालूम नहीं है। घर में जब तक का अनाज था तब तक खाना बनता रहा, आगे क्या हो ! नौकर भी दो दिनों भूखा रहकर भाग गया।

छोटू का पढ़ाई में भला क्या मन लगता। अकेला घर भूत का डेरा लगता। उसे डर भी लगती। रात को अपने कमरे को बंद करके भीतर ही पड़ा रहता। उसे घुटन लगती। दादा थे तो दिन भर लोग भीड़ लगाये रहते थे। अब कोई झांकने भी नहीं आता।

उसे याद आया। उसका एक साथी अपने घर से लड़कर कलकत्ता भाग गया था। वहाँ उसे किसी दफ्तर में छोटा सा काम मिल गया था। उसके जो पत्र आते उससे छोटू को लगता था कि वह वहाँ पड़े मजे में है।

छोटू ने सोचा कि जब यहाँ खाने का भी प्रबन्ध नहीं तो फिर क्यों न बह भी कलकत्ता अपने मित्र के पास ही चला जाये। उसे भी कोई न कोई काम मिल ही जाएगा। जब तक दादा नहीं आते वह वहीं रहेगा। अपने मित्र की ही तरह कलकत्ते में कोई काम कर लेगा। जब उसका मित्र वहाँ मजे में रह सकता है तो क्या वही नहीं रह सकता ? यहाँ वह किसके सहारे रहे ! कुछ भी तो उसे

नजर नहीं आता ! पढ़ाई भी किस प्रकार चलाये ? स्कूल की फीस कहाँ से लाए ? दादा की शहर में जितनी प्रतिष्ठा है, जितना मान है उसके कारण वह किसी से न तो दया के लिए प्रार्थना कर सकता है, न कहीं और जाकर निराश्रित बनकर रह सकता है। उसे अपने प्रत्येक कार्य में दादा की प्रतिष्ठा का सदा ही ख्याल रहता है !

एक बार मन में आया कि जाकर वह किसी दादा के मित्र के यहाँ ट्यूशन माँगे। इससे फीस और खाने भर को पैसे तो आ जायेंगे। पर रहेगा कहाँ ? अगर यही मकान अपने पास रखता है तो किराया देने भर का ही वह हो जायगा।

हिम्मत उसकी टूट चुकी थी अतः पढ़ाई रोककर वह दो तीन दिन यों ही मारा मारा घूमा। फिर एक दिन अपने बरामदे में पड़े तख्त और कुर्सियों को पड़ोस के वकील साहब के हाथ बेचकर पैंतीस रुपये प्राप्त किए और उसी रात की गाड़ी से हावड़ा का टिकट कटा कर रवाना हो गया।

मित्र के साथ कलकत्ते में छोटू रहने लगा। इस विशाल नगरी में आकर पहले तो वह हफ्तो भौचक्का सा इधर-उधर सड़कें नापता घूमता। कलकत्ता का यह कोलाहल, यह जनसमूह, भीड़-भाड़ मोटर गाड़ियों का इतना मेला, सब कुछ उसे चकाचौंध कर रहे थे। लेकिन थोड़े ही दिनों बाद उसने अपना रास्ता चुन लिया।

एक सौ सोलह

उसका मित्र एक दफ्तर में डिसपैचर का काम करता था। छोटा सा काम था, छोटी तनख्वाह थी। केवल पैंतालिस रुपये। एक कोठी के निचले भाग में गली की तरफ एक नौकरों वाली कोठरी को छः रुपया महीना पर लेकर वह रहता था। उसी के साथ रहन की व्यवस्था तो कर ली। पहले तो मित्र छोटू को बड़े प्रेम से खिलाता पिलाता और दूसरे तीसरे दिन सिनेमा भी दिखाने ले जाता। लेकिन जब महीना पूरा हो गया और छोटू कोई भी काम खोज पाने में समर्थ न हो सका तो उसकी दृष्टि में थोड़ा सा बदलाव आ गया। पहले का मेहमान अब बोझ बन गया था।

छोटू ने देखा और सब कुछ समझ गया। उसका स्वाभिमान जराजागा। वह काम के लिए घूमता-घूमता थक जाता लेकिन उसका मन कभी न थकता।

आखिर बड़ाबाजार की एक बिजली के समान की दूकान पर तीस रुपये महीने पर काम मिल गया। बिजली के मिस्त्री के साथ सीखेगा। सीख जाने पर पचास साठ मिलने लगेगा। वह दिन भर काम में मन लगता, बिजली का पंखा ठीक करता फ्यूज बनाता, फिटिङ्ग भी करता। और सब प्रकार के काम में वह धीरे-धीरे निपुण होने लगा। अब उसके मित्र से उसकी मित्रता फिर गहरी हो गई।

इस प्रकार छः महीने बीत गए।

एक सौ सत्तरह

छोटू अब अपने कामों में बहुत चतुर हो गया है। वह सब काम अब अपने से कर भी लेता है। जैसे वह बिजली का फ्यूज बना लेता है, पंखों को ठीक ठाक कर देता है और बिजली के मरम्मती कामों के अलावा और भी थोड़े से फुटकर काम वह सीख गया है। रेडियो में थोड़ी बहुत शिकायत आ जाए सो भी वह ठीक कर लेता है। सिलाई की मशीन ठीक देता। तेल आदि दे देता। इस प्रकार किसी भी परिवार की छोटी-मोटी जरूरत वह अपने कौशल से पूरी कर देता। उनकी तनख्वाह भी काफी हो गई है। फिर यह सब काम करके वह ऊपर ही ऊपर काफी पैदा कर लेता। यानी वह इतना पैदा कर जिससे उसकी जिन्दगी बड़ी अच्छी तरह कट रही थी।

इसी बीच एक घटना और हो गई। हुआ यह कि उसके मित्र की किसी कारणवश नौकरी छूट गई। और थोड़े दिन बेकार रह-कर वह जमशेदपुर चला गया। छोटू चाहता था कि वह न जाए। थोड़े दिन बाद कहीं न कहीं काम लग ही जायगा नहीं तो, छोटू इतना कमाता ही है कि दोनों का काम चल सके। लेकिन उसके मित्र का जाने क्यों कलकत्ता से जी उचट गया था। एक दिन एका-एक उसने जमशेदपुर जाने का निश्चय कर लिया। छोटू ने उसे टिकट कटा कर दे दिया, कुछ कपड़े और बिस्तर खरीद दिया और ऊपर से बीस रुपये भी दे दिए।

अब पत्र आया है कि उसे वहाँ फैक्टरी में काम मिल गया है। कलकत्ते में उसकी कोठरी का एकमात्र मालिक अब सिर्फ छोटू है। जब तक उसका मित्र था तब तक वह और मित्र मिलकर एक शाम

में दोनों शाम का खाना पका लेते थे लेकिन जब से वह अकेला पड़ा है तब से खाना पकाने का झंझट ही उसने समाप्त कर दिया है। एक छोटे से होटल में तीस रुपया माहवारी पर दोनों वक्त खा लेता है। अब उसकी मछली खाने को भी आदत पड़ गई है। मछली और भात! मजे में जिन्दगी बीत रही है।

खाने-पीने में ही बंगाली नहीं हो गया। वह बोली भाषा भी वैसी ही खूब सीख गया है। अब जल्दी ही कोई यह विश्वास नहीं करेगा कि वह बंगाली नहीं है। बंगाली बोल लेता है। सिर के बाल भी बड़े-बड़े रखता है। शाम को काला पैंट और सफेद कोट पहन कर सिनेमा देखने जाता है, बाजार घूमता है।

उसकी दिनचर्या भी बंधी बंधाई है। सुबह उठकर फौरन ही नहा लेता है और सीधा होटल चला जाता है। सबसे पहले एक प्याला चाय पीता फिर एक घंटे वहीं बैठकर अखबार उलटता और मोटी-मोटी खबरों पर होटल के बंगाली मालिक और अन्य इकट्ठे हुए लोगों से गप्प करता फिर खाना खाकर वहीं से काम पर चला जाता। दूकान जाकर मालिक से कहाँ-कहाँ क्या काम करना है, नोट कर लेता और दिन भर के लिए निकल पड़ता। रास्ते में कई जगह और भी छोटे-मोटे काम करके अपनी ऊपरी आमदनी बनाता।

फिर शाम को घर आकर, कपड़े बदलकर, निकल जाता टहलने, घूमने या सिनेमा देखने और वहाँ से नव दस बजे तक लौट आकर फिर होटल में खाना खाता और आकर सो जाता। यही थी उसकी दिनचर्या।

इसमें कहीं व्यवधान न पड़ता। कभी-कभी वह दादा के बारे में

सोचता। सोचता दादा जाने कहां जेल में पड़े हों। लेकिन वह पता भी तो नहीं लग सकता। कहाँ, किससे पता लगाए ? साथ ही एक बात से यह बिल्कुल निश्चित भी था कि चाहे जहाँ भी दादा हों ठीक ही होंगे और जेल से छूटेंगे तो पहले से बड़े नेता मान लिए जायेंगे ! इसलिए वह अधिक चिन्तित नहीं था। लेकिन जाने क्यों उसे दादा से अपना ही जीवन ज्यादा अच्छा लगता। मेहनत करना और मस्ती से रहता ! इससे अधिक रसमय जीवन उसे और कोई नहीं दिखाई पड़ता।

अब जब दादा आवेंगे तो वह एक बार हिम्मत करके दादा से कहेगा कि अगर वे नेतागीरी छोड़कर कोई काम-काज करें तो अच्छा हो। कलकत्ते में उन्हें भी तमाम काम मिल जायेंगे। फिर आजकल लड़ाई के कारण काम की कमी भी तो नहीं। काफी आमदनी होती है। उसने ऐसा सोचा।

लेकिन उसे मालूम नहीं था शायद कि नेतागीरी एक ऐसा नशा है जो एक बार मुँह में लग जाने से फिर नहीं छूटता। उसे सम्भवतः नेतागीरी से भविष्य के बारे में भी पता नहीं था।

इसी प्रकार अक्सर भविष्य की कुछ ऊटपटाँग बातें सोचकर वह मस्ती के दिन काट रहा था।

उसके अजीब-अजीब मित्र भी इस कलकत्ते में हो गये थे। और अब हर अजीब चीज उसे अच्छी लगती, स्वाभाविक लगती ! वह 'अजीब' का आदी हो गया था। अपने शहर की, पिछले जीवन की कभी उसे याद भी न आती। लेकिन एक व्याकुल और अस्पष्ट आशा से वह प्रतीक्षा कर रहा था कि दादा कब छूट रहे हैं।

दो तीन वर्ष बीतते भी कुछ लगता है क्या ?

छोटू काम तो दिन भर करता एक छोटे से मिस्त्री का लेकिन शाम को जब वह कोट पतलून पहनकर निकलता तो देखते ही बनता ।

युद्ध के कारण हाथ से काम करने वाले ऐसे मिस्त्रियों का मोल बहुत बढ़ गया था । दादा जेल में ही थे । उनकी कोई खोज-खबर न तो मिली न छोटू ने ही खोज-खबर ली । दादा पास नहीं थे तो छोटू मनमानी ही करता । मनमानी कर करके ही छोटू ने जीवन में इतनी प्रगति की थी इसीलिए कभी-कभी वह सोचा करता कि अच्छा ही हुआ कि वह यहाँ भाग आया नहीं तो अब तक पढ़ाईके

के नाम पर स्कूल में ही समय गँवाता रहता। काम करके, मनचाहा खर्च करके भी छोटू ने छोटी-मोटी रकम इकट्ठी कर ली थी। पोस्ट आफिस में हिसाब खोल कर। उसे अब बहुत अधिक आत्मविश्वास भी था कि वह अपने आप अब कुछ भी कर सकता है। और आज के मानव को इतना ही तो विश्वास चाहिए फिर तो वह जीवन में सब कुछ कर सकता है।

छोटू अब पूरा जवान हो गया था। दुनिया की रंगीनियाँ उसे अपनी ओर सदा ही आकर्षित करतीं और एक अजनबी की तरह चकित, विस्मित होकर छोटू कलकत्ता की जगमग देखता। उसे सिनेमा देखने की बहुत आदत पड़ गई थी। इसके कारण 'औरत' नाम से उसे अनजाने ही बहुत दिलचस्पी हो गई थी। हर युवती स्त्री उसे अपनी ओर आकर्षित करती। कभी-कभी वह किन्हीं पति-पत्नी को देखकर मन ही मन सोचता कि अगर उसकी भी शादी हो जाती तो अच्छा था। लेकिन उसे शायद मालूम न था कि शादी इतनी आसान चीज नहीं है। उसके लिए भी कुछ विशेषताएं चाहिए, जो अधिकांश छोटू में नहीं हैं। सबसे बड़ी कमी यह है कि उसकी कोई सामाजिक स्थिति नहीं है। कोई भी अपनी लड़की उस निठल्ले युवक के गले क्यों बांधे ? यह सभी चीजें, समाज के ये नियम छोटू देखता और समझता था। लेकिन वह करे भी तो क्या ?

छोटू के मन की बेचैनी का एक कारण और भी था। उसकी मित्रता कुछ ऐसे कलकतिया छोकरों से हो गई थी जिनके पेट में

दाढ़ी थी। जो देखने में और उम्र में बहुत बड़े न थे लेकिन दुनिया के हर अच्छे बुरे काम उनसे छूटे न थे। ये आवारा युवक इसके लिए रुपये कहां से पाते थे सो छोटू को मालूम न था। लेकिन एक बात थी कि जिस दिन छोटू उनके चक्कर में फंस जाता उस दिन सारा खर्च उसे ही करना पड़ता। इससे छोटू अनुमान लगाता कि ये लोग इसी प्रकार रोज ही किसी न किसी को फाँस लिया करते होंगे।

इन अपने विशेष मित्रों के साथ छोटू ने कई बार 'बहू बजार' "सोनागाछी' का भी चक्कर लगा लिया था। तीन-चार बार 'रौक्सी' होटल के 'केबिन' में बैठकर 'बियर' और रम का भी स्वाद ले चुका था। यह सब करने में उसे थोड़ी देर को तो बहुत आनन्द आता लेकिन बाद में उसके मन पर जो उदासी, जो खोखलापन छा जाता वह बहुत ही कष्ट देता। उसे लगता कि वह गलत रास्ते पर बढ़ता जा रहा है उसे सतर्क रहना चाहिए। लेकिन जब किसी चाय खाने में या किसी सिनेमा हाउस के पास उसके वे आवारा दोस्त मिल जाते तो वह विवश हो जाता।

ये मित्र उसे चुम्बक की तरह खींच लेते और फिर जब तक छोटू के जेब की पाई-पाई साफ न हो जाती, साथ न छोड़ते। अक्सर छोटू को इन मित्रों के कारण पैदल घर वापस आना पड़ता। वे इतना भी न छोड़ते कि छोटू रिक्शा करके या बस पर बैठकर घर वापस जा सकता।

छोटू को इन मित्रों पर जितनी कुढ़न होती उतना ही वह इनके कारण गौरवान्वित भी अनुभव करता। जिन्दगी के जो जो

चित्र इन्होंने दिखाए थे क्या वह अपने आप छोटू कभी देख सकता था ? जो-जो दृश्य, जो-जो रास्ते, जो-जो व्यक्ति इन्होंने दिखाए क्या वह खुद देख सकता था ? जो-जो काम, जो-जो अनुभव इन्होंने कराए क्या खुद कभी कर सकता था !

और ये ही चीजें ऐसी थीं जिनके कारण छोटू कभी-कभी सोचता कि अगर उसकी किसी प्रकार शादी हो जाती और कोई युवती पत्नी के रूप में उसके पास हर समय रहती तो थोड़ी सी मस्ती के लिए, थोड़े से सुख के लिए न तो इतने पैसे उसे बरबाद करने पड़ते न इतने गन्दे रास्ते पर चलना पड़ता । लेकिन कोई छोटू से भला पूछे तो कि आज इसकी उसे जरूरत पड़ ही क्यों गई कि बिना किसी स्त्री के उसका मन नहीं लगता । परन्तु शाम को शायद प्रतिदिन की पाँच, छः घंटे की मस्ती ने उसे यह सब सोचने पर विवश कर दिया था ।

किसी भी युवक के लिए, किसी भी युवती का सामिप्य वही भावना पैदा कर देता है जो शेर को मुँह में खून लगने पर होता है ।

अगर कोई व्यक्ति जीवन भर औरत से अलग रहे, उसके सामिप्य का स्वाद न पावे तो शायद जीवन भर उसे औरत की ओर ललचाई निगाह से देखने का अवसर न आवे । पर छोटू के मुँह में खून लग चुका था न ! अब रहा कैसे जाता !

इस तरह दिन भर तो आजकल किसी प्रकार छोटू अपने को काम में फँसाए रहता लेकिन शाम को जब वह काली पतलून और सफेद कोट पहन कर निकलता तो जैसे उसपर पागलपन छा जाता ।

एक चौबीस

उसकी कल्पना में हर समय औरत ही नाचा करती। और अपनी मानसिक शान्ति के लिए वह सीधे किसी सिनेमा हाउस में घुस जाता। वहाँ अंधेरे हाल के सफेद परदे पर नाचती अभिनेत्रियों की छवियां उसे तनिक शान्ति देतीं। और वहाँ से लौटकर वह उन्हीं के बारे में सोचता सोचता सो जाता।

इधर छोटू एक बात से बहुत द्रवित रहता। जब भी वह दिन को या शाम को किसी घर से पंखा, बिजली या सिलाई की मशीन ठीक करके निकलता, सिनेमा हाउस से निकलता, होटल से खाना खाकर बाहर आता तो सैकड़ों-सैकड़ों की संख्या में भिखमंगे उसे घेर लेते। इनमें छोटे बच्चों से लेकर बूढ़े-बूढ़ी तक होते। वह समझ नहीं पा रहा था। कि एकाएक कलकत्ता में यह भूखमरी की तादाद कैसे बढ़ गई! एक दो भिखमंगे तो अक्सर ही नजर आते थे और उनकी ओर ध्यान आकर्षित भी नहीं होता था लेकिन एकाएक जो इनकी तादाद सैकड़ों और हजारों की हो गई, इसका क्या कारण है? कहाँ से इतने लोग भीख माँगने कलकत्ता आ गए। फिर तो कुछ ही दिनों बाद हालत यह हुई कि पूरे कलकत्ता में घरों के बाहर, सड़कों के किनारे जितनी भी जगह थी सभी पर यही लोग पड़े रहते। छोटू को तो सबसे अधिक अजीब तब लगता जब वह युवती या नई उम्र की लड़की को इन गिरोहों में माँगते देखता, फिर ऐसी युवतियों की संख्या कम भी न थी।

बाद में पता लगा कि सारा बंगाल ही अकाल-ग्रस्त हो गया है। चावल के दाने देखने को भी नहीं मिलते। अपने होटल में सुबह और शाम जब भी वह चाय पीने और खाना खाने जाता तो

वहाँ इसी बात की चर्चा रहती । कुछ बंगाली लोग नियमित रूप से जुटते और यही चर्चा करते ।

अगर चावल नहीं है तो सरकार कहीं और चावल से क्यों नहीं मँगाती ?

भुखमरों को कलकत्ता आने से क्यों नहीं रोका जाता जिनके कारण यहाँ की जिन्दगी भी हराम हो गई है ?

इनके लिए कहीं अलग रहने का प्रबन्ध क्यों नहीं किया जाता जहाँ ये रहें और रिलीफ सोसाइटियाँ इन्हें खाना दें ?

इन सभी बातों को गरमागरम चर्चा वह सुनता और समझता । फिर तो धीरे-धीरे यह चर्चा रोज गरम होने लगी कि ये भूख से मरते लोग किस प्रकार थोड़े-थोड़े चावल के मोल पर अपने बच्चे बेंच रहे हैं । एक शाम के खाने पर युवती स्त्रियाँ अपना तन बेच रही हैं ।

स्त्रियाँ तन बेच रही हैं ! खाने के लिए !

छोटू बहुत कुछ सुनता, बहुत कुछ देखता, बहुत कुछ टाल जाता लेकिन उसका जी अजीब प्रकार से मसोसा करता ।

आजकल बहुत दिनों से उसकी भेंट उसके मित्रों से नहीं हो रही थी । सब के सब जाने कहाँ भाग गए । वे मिल जाते थे तो शाम कट जाती थी । आजकल वे नहीं मिलते तो विवश होकर सिनेमा और बाकी समय अपने होटल में बिताना पड़ता । क्योंकि घूमने टहलने के लिए कलकत्ते में एक भी स्थान ऐसा नहीं बचा जहाँ भुखमरों की टोली न हो ।

जब भी विवश होकर वह किसी ओर निकल जाता तो वह सभी दृश्य दिखाई पड़ते जिनकी होटल में चर्चा थी, अखबारों में चर्चा रहती। एक बार वह शाम को आ रहा तब उसने देखा कि एक युवती को एक व्यक्ति किस प्रकार एक शाम खाने पर फुसला कर रात भर के सिए अपने साथ ले जा रहा था। छोटू का जी चाहा कि दौड़ कर वह उस व्यक्ति का गला दबोच ले लेकिन वह कुछ कर न पाया। जाने किस शक्ति ने उसे रोक दिया। दोनों की आवश्यकता की पूर्ति हो रही है, तू क्यों बीच में टांग अड़ाता है!

छोटू ने सोचा, उस स्त्री को पेट की भूख मिटानी है और उस व्यक्ति को तन की भूख! सौदा जैसा भी पट जाए!

एक जगह और उसने देखा, एक बुढ़िया रो रही थी। पाव भर चावल पर अपना गोद का बच्चा बेंच दिया था।

छोटू मन में कुढ़ा—अब रोने से क्या होता है?

एक जगह और उसने देखा, एक युवती रो रही थी, उसकी शिकायत थी कि एक सेठ ने उसे चारों वक्त खाने पर तय किया था लेकिन रात को खाना देकर रात भर रखकर सुबह बिना खाना दिए ही निकाल दिया, घर से भगा दिया।

छोटू का मन चाहा कि उस युवती पर कसकर प्रहार करे—फिर क्यों गई थीं! लेकिन कोई शक्ति थी जो उसे बार-बार रोक लेती थी।

अचानक उसी शाम उसे अपने साथियों में से एक मिल गया। वह बड़ा व्यस्त था, कहीं जा रहा था। छोटू ने अपनी ओर से

बढ़कर उसे रोका। वह रुका भी लेकिन इतना व्यस्त था कि ठीक से बात भी न की। बस इतना बताया,

"आजकल 'टाइम' नहीं मिलता। एक नया 'बिजनेस' शुरू किया है। यही जो जवान लड़कियाँ भूखों मर रही हैं उन्हीं को खरीद बिक्री। अच्छी आमदनी हो रही है।"

लड़कियों की, जवान लड़कियों की, खरीद बिक्री! छोटू का जी गिनगिना गया।

जाते-जाते मित्र कहता गया, "छोटू, आजकल मौका है। कहीं से छांट कर एक खरीद ले! दस-पाँच में ही अच्छी छोकरी मिल जाएगी। जिन्दगी भर के लिए! चूकना मत! और न हो तो बताना मैं एक तुझे 'प्रेजेन्ट' कर दूंगा।"

छोटू लपका कि दो चपत लगाए लेकिन मित्र था, तरह दे गया। छोटू खीझता हुआ अपनी कोठरी में वापस आया वह खाना खाने होटल भी न जाएगा। वहाँ भी यही सब बातें होती हैं।

छोटू मन ही मन कुढ़ रहा था! अब कलकत्ता शरीफों के रहने की जगह नहीं। कहीं बहार निकलना नहीं, एक इंच भी जगह नहीं। कहाँ जाए, क्या करे? अगर वह एक दो व्यक्ति की मदद भी करे तो इन लाखों भूखमरों की समस्या हल नहीं होगी। उसे याद है किसी रिलीफ सोसाइटी के बहार दूध बंट रहा था बच्चों के लिए। लेकिन बांटने वाला व्यक्ति दूध डाल रहा था जवान लड़कियों के हाथ के बरतनों में। बच्चे कुछ नहीं पा रहे थे। इस समय भी आदमी कितना बुरा बन जाता है! यहाँ भी नियत

साफ नहीं रहती।

वह काफी रात तक यही सोच रहा था कि अचानक किसी ने दरवाजा खटखटाया।

छोटू डर गया। इतनी रात गए कौन होगा। पर शक हुआ शायद कोई साथी हो या जाने क्या बात हो। रोशनी जला न पाया।

उसने उठकर किवाड़े खोले कि दरवाजा खुलते ही कोई एक झटके से भीतर आ गया।

"कौन है ?"

कोई उत्तर नहीं।

"कौन है जी ? बोलता क्यों नहीं !"

इस बार भी कोई न बोला। छोटू बहुत डर गया ! डरते-डरते उसने लालटेन जलाई। और हाथ की सलाई की सींक फेंक भी न पाया था कि आगन्तुक को देखकर वह जैसे पहाड़ से गिर पड़ा।

"तू कौन है ? क्यों यहाँ आई ?"

आगन्तुक एक स्त्री थी। जिसे अच्छी तरह छोटू अभी देख भी न पाया था।

"कौन है तू ?" छोटू पूछ रहा था।

वह स्त्री रोने लगी—बुरी तरह रोने लगी। भाग कर आने के कारण थकान से हाँफने और सिसकियों के मिलने से एक अजीब प्रकार की आवाज उस स्त्री के मुँह से निकल रही थी। छोटू ने

लेम्प पास लाकर रखा। और देखा—गोरा रंग, बिल्कुल युवती, उसी के उम्र के आस-पास होगी। फटे चीथड़ों में। रोते-रोते आँख लाल थी, नाक में कील की जगह मुनी थी। कान भी सूना था, बाल रूखे थे, लेकिन पूरा शरीर काफी आकर्षक था। ऐसी छबियाँ अक्सर उसने सिनेमा में देखी थीं—

सिनेमा की ही तो कोई नहीं! उसको रोमांच हो आया। लेकिन यह रोमांचित होने का अवसर नहीं था!

"कौन हो तुम, बोलो न!"

वह लड़की केवल रोती रही। उसके उत्तर न देने से छोटू को बड़ी झुंझलाहट हुई। लेकिन वह करता भी क्या? फिर पूछा,

"यहाँ क्यों आई है?"

"मैं क्या करूँ?........."वह और जोर से रो पड़ी।

प्रश्न का उत्तर प्रश्न से ही पाकर छोटू बहुत चक्कर में पड़ा। उसको नए सिरे से पूछना पड़ा।

"क्या तुम भी इन अकाल पीड़ितों में हो?"

"हाँ.........।" सिसकियों के बीच वह बोली।

"कहाँ की हो?"

"यहीं कलकत्ता के उत्तर डेढ़ सौ मील दूर बावूगंज से आई हूं।"

"तुम्हारे साथ कौन-कौन है?"

"पिता बहुत पहले मर गए थे, मेरे बचपन में। माँ परसों यहीं मर गई। मेरा छोटा भाई, आठ-नव साल का, कहीं खो गया कल! और मैं......मैं......!"

"तुम यहाँ कैसे आई ?"

"मुझे यहाँ भेजा गया है। कुछ लोग मिले थे उन्होंने बताया कि आपको जरूरत है............।"

"क्या ? किसने भेजा ?"

"दो युवक थे। मुझे यहाँ तक छोड़ गए ?"

"अब क्या इरादा है ?"

"आपका हुक्म ?" अब लड़की कुछ अच्छी तरह बोल रही थी।

"तुम पढ़ी-लिखी लगती हो।"

"हां, थोड़ा पढ़ी हूं। बंगला और थोड़ी हिन्दी भी।"

यह उत्तर पाकर छोटू को प्रसन्नता हुई। सोचा कि जरा जात-पांत भी पूछ ले पर इतनी हिम्मत न पड़ी !

मन में कोई कह रहा था—इतना तो पूछ लिया। और क्या चाहिए। जाँत पाँत से क्या लेना देना ! सुन्दर है, पढ़ी है, लिखी है ! एक औरत की जरूरत थी न सो मिल गई ! अगर मन पटेगा तब बाद में शादी भी कर लेगा ! भगवान् ने भेज दिया है !! सुन्दरी है !

भीतर से जो कोई यह सब कह रहा था, उसके कहने में इतता अधिकार था कि उसकी बात को छोटू टाल न सका।

लेकिन इस बात ने उसके अन्तर में हाहाकार मचा दिया था। सहज में ही चली आई इस युवती को वह ग्रहण कर ले ! इसका उत्तर भी उसके पास न था। उसने फिर प्रश्न किया।

"अब तुम्हारा क्या इरादा है ?"

"जो आज्ञा द······आप ?" वह लड़की उदास हो गई थी।

"क्या बराबर रहोगी हमारे साथ ?"

"क्या ?" लड़की चौंक पड़ी।

"हाँ, पूछता हूं ! क्या बराबर रहोगी ?"

"उसने तो कहा था कि आज रात भर······!,

"मैं जो पूछूं, बताओ।"

"रहूंगी !"

"कब आई हो कलकत्ता ?"

"परसों ही।"

"परसों और कल रात कहाँ थीं ?'

"फुटपाथ पर !"

आगे और खोलकर पूछने में छोटू को ही झेंप लगी।

"कुछ खाया है ?"

"याद नहीं, कितने दिनों से नहीं खाया।"

अब तक लड़की का पूरा चेहरा खुल गया था। छोटू गौर से देख रहा था। सचमुच कितनी भोली-भाली और सुन्दर शक्ल है।

वह क्या करे क्या न करे !

"अच्छा तू बैठना मैं अभी आता हूं।"

"क्या किसी को बुलाने······।" लड़की डर गई।

"नहीं नहीं आता हूं, कहा न !" और वह कमरे से बाहर जाते हुए किवाड़े भेंड़ता गया।

निरुद्देश्य ही वह निकल पड़ा था। यह नया ढोल गले आ

पड़ा ! अब क्या करे ? क्या उसे स्वीकार करके मजे से जिन्दगी काटे या पिण्ड छुड़ा ले ? क्या करे कुछ समझ में नहीं आता ! किससे पूछे कोई नजर नहीं आता । वह सोचता जा रहा था । कह रही थी कि दो लोग मुझे भेज गए हैं । तो क्या उसके मित्रों ने यह कृपा की है । कह रही थी कि अभी तक कहीं नहीं रात भर……तो अभी तक साफ सुथरी है । लेकिन क्या विश्वास किया जाय ! विश्वास न भी क्यों किया जाय ! अविश्वास के कारण भी क्या हैं ? कह रही थी बँगला और हिन्दी भी पढ़ी लिखी है निभ सकती है ! सुन्दरी है, मन की भली लगती है ।

तभी उसने पाया कि वह बड़ी सड़क पर ही चलता चलता काफी दूर निकल आया है । सामने के सिनेमा हाउस से शायद अभी-अभी 'सेकेण्ड शो' समाप्त हुआ था । हाउस के सामने का हलवाई भी दूकान समेट रहा था । हलवाई की दूकान सामने पड़तेही उसे लड़की के शब्द याद आए याद नहीं, कितने दिनों से नहीं खाया ।

अपने आप छोटू के पाँव हलवाई की दूकान की ओर बढ़ गए । उसे देखते ही हलवाई ने पूछा, "इतनी रात को बाबू ! सिनेमा से लौटे हो क्या ?"

"नहीं भाई, घर में मिहमान आ गए हैं, जरा थोड़ी सी मिठाइयाँ तो दे देना !"

"आज के जमाने में भी मिहमान इस कलकत्ते में आते हैं ?" कोई दूसरा ग्राहक था, वह बोला ।

मिठाई का दोना हाथ में लिए जब वह अपने कमरे की ओर

वापस आया तो उसका जी काफी सम्हल चुका था। उसने कुछ निश्चय भी कर लिया था।

दरवाजा भीतर से बन्द था।

"खोलो!" छोटू ने आवाज दी और झटपट दरवाजा खुल गया। घुसते हुए ही उसने पूछा, "तुम्हारा नाम तो पूछा ही नहीं!'

"मेरा नाम शोभना है। बेधड़क उस लड़की ने कह दिया।

"अच्छा-अच्छा, लो यह खा लो जल्दी से। रात काफी हो गई। कहते हुए उसने दोना शोभना की ओर बढ़ा दिया।

शोभना ने दोना नहीं पकड़ा। उसके कानों में छोटू का आखिरी वाक्य गूँज रहा था—रात काफी हो गई! रात काफी हो गई! तो क्या आज रात भर ही......। लेकिन यह पूछ रहा था न अभी कि बराबर साथ रहोगी। शायद मन बदल गया क्या? उसका जी काँप गया। अब क्या होगा?

लेकिन वह अबला हर कुछ के लिए तैयार थी।

छोटू ने गौर से देखा कि अब तक वह अपने शरीर परके चीथड़ों को ही काफी सम्हाल कर पहन चुकी थी। पहले की तरह नहीं दीखती थी अब! उसने बहुत प्यार से कहा।

"लो खा लो।

इस बार भी जब शोभना आगे न बढ़ी तो छोटू को ही बढ़ना पड़ा। छोटू ने शोभना के कंधे पर हाथ रखा और इस तरह दबाया कि वह बैठ गई, वहीं जमीन पर। छोटू ने उसके सामने

दोना रख दिया और खुद पीछे हटकर अपनी खाट पर पाँव नीचा करके बैठ गया। कुछ बात करने को उसने कहना शुरू किया,

"तुम्हारी तकदीर थी कि अभी तक दूकान खुली थी नहीं तो भला मैं क्या खिलाता।...............हाँ शोभना, मैंने निश्चय कर लिया है। तुम हमेशा मेरे साथ रहोगी। तुम्हें तकलीफ नहीं होगी, अराम से रखूँगा। यह तुम्हारा ही घर हो गया आज से। समझीं ! बहुत अच्छा है तुम्हारा भी दुनिया में कोई नहीं और मेरा भी कोई नहीं। हम दोनों मिलकर जिन्दगी काट ही लेंगे।'

इतना कहकर खाटपर पड़ी डिब्बी से छोटू ने सिगरेट निकाल कर जलाई और पीने लगा। एक बार भर मुँह धुआँ जो उसने छोड़ा तो कमरा भर गया।

छोटू की बातों से शोभना को अजीब सा लग रहा था यह क्या हो रहा है। क्या यह संभव है कि कोई व्यक्ति इतनी आसानी से उसे स्वीकार कर ले ? घर सौंप दे। या फरेब कर रहा है ? लेकिन जब वह हर प्रकार के फरेब के लिए ही तैयार होकर इस रात यहाँ आई थी तब अधिक की क्या चिन्ता !

छोटू ने फिर कहना शुरू किया, "और हाँ, कल ही तुम्हारे लिए मैं कपड़े ला दूँगा। और.........और सब धीरे-धीरे ठीक हो जाएगा। अरे तुमने खाना नहीं शुरू किया ? अच्छा मैं चला जाता हूँ। शर्माने की क्या बात है। खा लो तो आऊँगा लेकिन अब तो जिन्दगी भर रहना है न ! इस तरह शर्म करने से कैसे काम चलेगा ?'

उठकर वह जाने लगा तो एकाएक शोभना बोल उठी, "आप नहीं। मैं खा लूँगी; खाना ही पड़ेगा लेकिन सोच रही थी कि यह सब जो आप कह रहें हैं......... कहते कहते वह जोरों से रो पड़ी, "क्या मैं इस लायक हूं.........सुना था कि कलकत्ता में स्त्रियों के साथ.........।

"हाँ स्त्रियों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं होता। लेकिन तुम्हें समय बताएगा। मैं तो तुम्हें अपना मान चुका हूं। कहते-कहते जाकर छोटू ने शोभना को पकड़ लिया। सहारा पाकर और जोर से रो पड़ी। छोटू ने उसे बिल्कुल ही अपने से चिपका लिया।

थोड़ी देर रोकर शोभना ने खुद ही रोने का वेग कम किया कि छोटू ने अपने हाथ से मिठाई उठाकर शोभना के मुँह में रखा। अब उसे खाने के सिवा शोभना के पास क्या था। उसे अजीब अनुभव हो रहे थे। यह आदमी कितना स्नेह दे रहा है। क्या यह सब फरेब ही है ?

फिर तो शोभना ने उसे खा लिया और उसे एक गिलास में पानी देकर छोटू फिर अपनी खाट पर चला गया। वह लेटा तो उसे लगा कि शोभना कहाँ सोएगी। बिछौना भी तो नहीं कि वह जमीन पर ही सो रहती। लेकिन वाह, वह जमीन पर क्यों सोएगी !

"शोभना, आकर इधर ही सो रहना। कहते हुए छोटू को अजीब सा लगा। उसने सोने का अभिनय किया। आँख मूँद ली कि देखें शोभना क्या करती है। लकिन वह उसी जमीन पर बैठी रही।

एक सौ छत्तीस

थोड़ी देर बाद छोटू उठा। जाकर हाथ पकड़कर शोभना को उठाया और अपनी ही खाट पर लाकर लिटा दिया। फिर उसकी ओर पीठ करके खुद लेट गया।

इस समय जाने क्यों उसका जी बहुत जोरो से धड़क रहा था। और शोभना की अजीब स्थिति थी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या हो रहा है, क्या होगा! वह मन ही मन काँपी जा रही थी—कहीं सचमुच यह फरेबी निकला तो? लेकिन हर कुछ के लिए तैयार भी तो थी।

थोड़ी देर बाद जब छोटू ने सिर घुमाया तो देखा कि शोभना लेटी न थी, उठकर पैताने बैठी थी गुमसुम।

"क्या नींद नहीं आ रही? या तकलीफ है! अच्छा तुम सोओ। मैं जाता हूं। कहीं पार्क में सो रहूंगा।"

"नहीं-नहीं, ऐसा नहीं, मैं सो जाऊंगी।" और झटपट शोभना लेट गई। और मुस्कुराकर वह भी लेट गया। हाँ फिर वह न उठ बैठे इससे उसने अपना दायाँ हाथ करवट लेटी हुई शोभना के ऊपर रख दिया।

शोभना के शरीर पर छोटू का हाथ पड़ा तो जैसे शोभना का सारा शरीर पिघल कर पानी की तरह बहने लगा।

फिर उस रात बड़ी देर तक छोटू जागता रहा—दुनियाँ भर की अजीब अजीब बातें वह सोचता रहा। काफी रात गये उसे नींद आई।

और सुबह अचानक उसकी नींद खुली तो उसे लगा जैसे कोई

अपनी उंगलियाँ उसके बालों में फेर रहा हो। हाथ बढ़ाकर देखा। शोभना उसके सिर में तेल लगा रही थी।

अरे, यह क्या, यह क्यों ? तुम सोई नहीं क्या ?" वह उठ बैठा। "चलो उठो, चाय लाता हूं ! यह तुमने क्या किया ?"

शोभना मुस्कुराती रही। पहली बार छोटू ने उसे मुस्कुराते देखा। प्यार से गाल पर हाथ मार कर कहा "पानी है वह, मुंह हाथ धो लो, नहाने का तो प्रबन्ध नहीं। मैं आता हूं।"

और वह बाहर निकल गया।

शोभना बैठी रही, सोचती रही, कैसा आदमी है यह !

और जब वह लौटा तो केटली में चाय और दोने में नाश्ता लिए था। शोभना भी मुंह हाथ धो चुकी थी। लेकिन उसे बड़ा अजीब लग रहा था जो कुछ वह पहने ओढ़े थी ! लेकिन विवशता भी एक समझौता है न !

चाय पीते काफी देर लग गई।

फिर छोटू बिना कुछ कहे चला गया, बाहर। दस तो बज ही चुके थे। एक घंटे बाद वह लौटा तो उसके हाथ में एक साड़ी थी। एक ब्लाउज, एक चुटिल्ला, एक बड़ा कंघा और एक जोड़ी चप्पल।

शर्मा कर उसके हाथ से सब लेकर शोभना ने सहेज लिया। उसके मन में हो रहा था कि आज कितने दिनों बाद वह नए कपड़े पहनेगी ! तो क्या सचमुच यह उसकी नई जिन्दगी शुरू हो रही है। उसको कभी विश्वास होता और कभी उसकी हिम्मत छूट जाती।

एक सौ अड़तीस

लेकिन कल रात को जो कुछ उसने व्यवहार किया है उससे तो उसे बुरा कदापि नहीं कहा जा सकता। उसकी विवश परिस्थितियों में भी क्या कोई दूसरा पुरुष रात भर अकेली पाकर अछूता छोड़ता! वह सब समझती थी। यह बहुत अच्छा आदमी है। या हो सकता है कोई बहुत बड़ा फरेबी हो! लेकिन अब शोभना यह निर्णय अपने भाग्य पर ही छोड़ देगी।

थोड़ी देर बाद छोटू ने शोभना से कहा—"शोभना मैंने जो कुछ सोचा है, सोचता हूं तुम्हें भी बता दूं। देखूं तुम्हारी क्या राय है!"

शोभना खड़ी छोटू का मुंह ताकती रही।

छोटू ने उसका हाथ पकड़ कर खींचा और खाट पर अपने पास ही बिठा लिया। छोटू जितना प्रेम और आदर शोभना को दे रहा था कि शोभना का रह-रहकर जी चाहता था कि वह छोटू से लिपट कर मन भर कर एक बार रो ले। तभी शायद उसके अन्तर का तूफान शान्त होगा लेकिन वह किसी तरह अपने को रोके रही।

छोटू ने कहा, "देखो हम लोग गरीब आदमी हैं। जब तुम मेरे पास आ ही गईं तो समझो कि हमारा तुम्हारा अब जीवन भर का साथ हो गया। समझीं! हम लोगों की शादी नहीं हुई लेकिन समझो कि हम लोग अब ब्याह दिए गए हैं। क्यों?"

शोभना चुप ही रही।

"अरे हाँ। यह कोठरी अब काम नहीं दे सकती। देखो न कितनी मुश्किल से एक ही खाट बिछ पाई है। रात को तुम्हें भी

सोने में कितनी तकलीफ ही हुई थी।" इतना कहकर वह क्षण भर रुका कि शोभना के चेहरे को देखे शोभना भी इस वाक्य से जाने क्यों सुगबुगा गई। उसका चेहरा शर्म से चमक उठा वह एकटक फर्श पर ही देखती रही। छोटू को यह बहुत अच्छा लगा। उसने आगे बात चलाई।

"सो......हाँ, आज तुमने सिर में तेल डाल दिया था न। आज सिर बहुत हल्का लगता है। ऐसा सुख जीवन में कभी नहीं मिला।"

इतना सुनते ही शोभना जैसे पानी हो गई! और इस बार उसका लाल हो जाना छोटू को कितना प्यारा लगा कि वह अपने को रोक न सका। उसने आवेश में आकर शोभना को खींच लिया और अपने अंक में भर लिया। शोभना भी सर्वस्व पा गई। वह इस प्रकार छोटू के शरीर से चिपक गई जैसे उनके दो शरीर न हों। आंखें बन्द किए कब तक छोटू की छाती पर सिर रखे पड़ी रही, उसे ख्याल नहीं। छोटू को भी स्मरण नहीं की कब तक उसकी बाहें शोभना के शरीर को दबोचे रहीं थी।

बहुत देर बाद शोभना ने उसी प्रकार कहा। उसका सिर छोटू के ऊपर ही था, "आप कुछ बता रहे थे!"

"हाँ, हाँ, ठीक याद दिलाई तुमने। कह रहा था कि इस कोठरी में दोनों कैसे रहेंगे। मैं तो बाहर नल पर जाकर नहा लेता हूं। पर तुम क्या करोगी? यहाँ कितना पानी लाया जायगा और जब सभी जानेंगे कि यहां तुम रहती हो तो यहाँ तुम्हारी सुरक्षा का क्या होगा फिर अगर दूसरा घर तलाश भी करूँ तो क्या कम किराए में

मिलेगा ? इतना पैसा खर्च करना भी नहीं है। और सच कहूं। अब मुझे कलकत्ता अच्छा नहीं लगता। यहाँ जो कुछ देखना पड़ता है वह देखा नहीं जाता। जी करता है कि कहीं और चलें। मेरे हाथ में जो हुनर है उससे हम कहीं भी जीवन बिता सकते हैं। मजे में जीवन बीत सकता है।"

कलकत्ता छोड़ने की बात जब वह कह रहा था तब अनुभव कर रहा था कि उसकी बात सुनकर शोभना बहुत चंचल हो रही है। उसके हाथ और सिर बुरी तरह उसके शरीर में घुसे जा रहे थे। जैसे मन ही मन शोभना भी कह रही थी—"हाँ यह कलकत्ता छोड़ दो। जरूर छोड़ दो। यहाँ मुझे अच्छा नहीं लगता। यहाँ चारों ओर भूत नाचते हैं। कहीं और चलकर रहने में ही शान्ति है।"

"तुम्हारी क्या राय ?" छोटू ने पूछा।

"आप ठीक ही सोचते हैं। मुझे भी यहाँ, अच्छा नहीं लगता।" शोभना ने कह ही दिया।

इससे छोटू को बड़ी शान्ति मिली।

फिर दोपहर को होटल से खाना लाने के पहले छोटू एक बालटी पानी लाकर कमरे में रख गया। और जब खाना लेकर लौटा तो देखा कि उसके कमरे में पहले वाली दरिद्र शोभना की जगह कोई आधुनिक सुन्दरी बैठी है। साफ सुथरी, नहाई धोई ! बंगाली ढंग से नई धोती पहने, नई ब्लाउज, और सिर के रुखे बालों की जगह संवारे हुए बाल, बड़ा सा जूड़ा और सबके ऊपर

एक खिला हुआ नवयौवना का चेहरा ! लगता है साबुन का अच्छी तरह प्रयोग किया था जिसके कारण चेहरे की लाली पर हल्की सफेदी की भी एक पर्त जम गई थी, और वह उसकी शोभा को दुगुनी कर रही थी।

"अरे शोभना, यह तुम हो !" घुसते ही छोटू ने पूछा।

शोभना शर्माती, मुस्कुराती हुई उठी। छोटू के हाथ से समान लिया और उसे सजाकर जमीन पर रखने लगी।

छोटू एक टक अपने कमरे में घुस आई इस इन्द्र की परी के सौन्दर्य को देखकर आश्चर्य चकित होता रहा। वह सोच रहा था कि क्या उसी के भाग्य से यह अकाल आया था जो उसे शोभना मिल ग ई।

शोभना ने जब खाना रख लिया तो दोनों ही बैठकर खाना खाने लगे। दोनों ही अनुभव कर रहे थे कि धीरे-धीरे संकोच की बात अपने आप खतम होती जा रही है।

यह भी छोटू को अच्छा लगा। वह तो शोभना के रूप को ही देखकर, चकित, विस्मित था। रात की और दिन की शोभना में अंधेरे और उजाले का अन्तर है। उससे नहीं रहा गया तो उसने पूछा, "शोभना, तुम इतनी सुन्दर हो, यह अभी तक नहीं जाना था।"

शोभना भला क्या उत्तर देती ! शर्माने के सिवा था भी क्या उसके पास। और जब शोभना शर्माती है तो छोटू बेतरह चंचल हो जाता है। उससे अब भी न रहा गया तो उसने तरकारी लगी उङ्गलियों से शोभना के लाल गाल को छू दिया ! प्रेम की झिड़की

पाकर छोटू मन ही मन धन्य हो रहा था।

दोपहर जरा ढली तो शोभना ने कहा, "अगर कलकत्ता के बाहर चलना है तो चलिए न, जितनी जल्दी…।"

"हाँ कल सुबह चलूँगा, सोचा है पटना चलूँ। हाँ, आज जब खाना लेने गया था न, दोपहर को तो मेरे वे दो पुराने मित्र मिले थे जिन्होंने तुम्हें यहाँ भेजा था। तब मैंने जाना कि तुम यहाँ कैसे आई ?"

"क्या वे आपके मित्र—।" शोभना चीख पड़ी जैसे घबड़ा गई हो।

छोटू को अपनी गलती का भास हुआ। उन्हें अपना मित्र बता कर शोभना की नजरों में वह गिरना नहीं चाहता।—"नहीं, नहीं, वे आवारे हमारे मित्र कैसे ? लेकिन जानती हो। दुनिया में सबों से जान-पहचान हो ही जाती है।"

शोभना का चेहरा बदला, छोटू की जान में जान आई।

फिर शोभना को लेकर छोटू बाजार गया। शोभना के लिए दो सेट कपड़े खरीदे। थोड़ा सा क्रीम पाउडर और कुछ फुटकर चीजें।

उस शाम दोनों ने बाहर ही खाना खाया।

और उस रात दोनों को एक ही खाट पर सोने में अधिक कष्ट नहीं हुआ।

दोनों कितनी देर जागे, कितनी देर सोए सो इसका हिसाब नहीं रखा। हाँ सुबह उठे तो दिन काफी चढ़ आया था। घबड़ा कर छोटू ने कहा, "अब सुबह की गाड़ी कैसे मिलेगी।"

शोभना यों हो गई जैसी उसी का अपराध है और उसी के कारण देर हुई है।

"कोई बात नहीं। शाम वाली गाड़ी से चलेंगे तो कल सुबह पटना पहुंच जायेंगे।" कहते-कहते छोटू ने खाट छोड़ी !

उस दिन काफी देर तक छोटू घर से बाहर रहा। कमरे में शोभना अकेले घबड़ा रही थी। आते ही उसके कंधे से लगकर बोली, "कहां चले गए थे।"

"अपने काम-काज के पैसे-वैसे वसूलने गया था। पोस्ट आफिस में कुछ पैसे थे सो लेने। देखो कितना रुपया मिल गया। नहीं तो पटना में कैसे होता।" कहते-कहते उसने जेब से नोटों का एक बंडल निकाल कर शोभना के हाथों में थमा दिया।

शोभना को अजीब लगा। हाथ में नोट गरम लग रही थी। उसने अंदाज किया, दो सौ रुपयों से अधिक की होंगी। अनेक दस की और पाँच की नोटें शायद तीन सौ से भी ज्यादा हों।

उसने फौरन ही उन्हें छोटू को वापस कर दिया।

"तुम डर गई थीं क्या ?" छोटू ने नोट को जेब में रखते हुए पूछा।

"नहीं तो, लेकिन यह कलकत्ता है न !" शोभना ने कहा और हंसकर छोटू ने उसे दबोच लिया, "कलकत्ता हो या कुछ, अब तुझे डरने की जरूरत नहीं।"

उस शाम को साढ़े सात बजे जब हावड़ा स्टेशन से सियालदाह एक्सप्रेस छूटी तो थर्ड क्लास के एक डिब्बे में पास-पास छोटू और शोभना ने शान्ति की सांस ली। छोटू प्रसन्न था और शोभना मन ही मन काली जी से अपने भाग्य के लिए कुछ कह रही थी।

पटना स्टेशन से शहर की ओर जो रास्ता जाता है उस पर आगे चल कर बाएँ हाथ पर एक आधे कच्चे और आधे पक्के मकान में एक छोटी सी तख्ती लटकी है उस पर लिखा है बिजली के सामानों की मरम्मत होती है—इसी मकान में छोटू और शोभना मंगल मनाते हुए रह रहे हैं।

इस घर से शहर के अधिकांश व्यक्ति परिचित हैं। बिजली की हर प्रकार की खराबी, पंखे, सिलाई की मशीन, कुछ भी बिगड़े यह घर अस्पताल का काम करता है।

और आज इस मकान में आये छोटू और शोभना को कितने दिन बीते इसका उनके पास कोई हिसाब किताब नहीं।

यहाँ आकर शोभना और छोटू ने जो अपनी नई जिन्दगी शुरू की उससे इन्हें कभी क्षण भर को छुट्टी ही न मिली कि कभी वे कुछ और सोच पाते।

सुबह से लेकर शाम तक छोटू भूत की तरह अपने काम में लगा रहता और यही कारण था कि उसे पैसे की कभी भी कमी अनुभव न हुई। काम, काम, काम, आमदनी, आमदनी, आमदनी, !

और शाम को काम से लौटकर वह कपड़े बदल कर शोभना के साथ घूमने फिरने या सिनेमा के लिये निकल जाता। फिर शाम को उसके और शोभना के सिवा कोई तीसरा विचार भी उसके पास न फटकता। शोभना भी अपने जीवन में आये इस नये मोड़ से मन ही मन काफी प्रसन्न है। यद्यपि उसका घर छूट गया घर-वाले छूट गये और बहुत बड़ी बड़ी मुसीबतों की झांकी भर देखकर वह रह गई थी। वह मन ही मन सोचती कि अच्छा हुआ जो उसे छोटू मिल गया नहीं तो जाने उसके भाग्य में भी वही सब देखने को मिलता जो आज बंगाल की हजारों नारियों को देखना पड़ रहा है। दो दाने चावल के लिये कलकत्ते के जाने कितने सेठों का मुँह देखना पड़ता और शोभना अकसर मन में सोचती कि मान लो उसकी शादी ही हो जाती तो उसको अपने पति के पास जहाँ कभी भी वह रहता जान पड़ता या नहीं ! और छोटू हर तरह से उसका पति ही तो है। शादी की रसम भर नहीं हुई लेकिन इससे क्या ! उसने देखा है कि छोटू उसे जितना प्यार करता है अनेक पति अपनी पत्नियों को उतना प्यार नहीं करते। और अधिक की वह कामना भी क्यों करे !

और छोटू है जो सोचता है ! यह शोभना जाने कहाँ से उसके जीवन में घुस गई। यह शोभना आ गई और हिम्मत करके उसने स्वीकार कर लिया सो कितना अच्छा हुआ। उसका घर कितना सुखमय बन गया है। उसके पास न घर था, न घरवाली और उसने कभी इसकी कल्पना भी न की कि अचानक ही यह सब हो गया। उसके माता पिता नहीं, बड़े भाई भी जैसे हैं बेकार ही हैं, नेता क्या कभी कुछ कर सकता है ! फिर जब उसकी अपनी कोई सामाजिक स्थिति ही नहीं तो भला वह शादी की आशा ही क्यों करता ! और छोटू यह भी तो अच्छी तरह जानता है कि वह अकेला रह भी तो नहीं सकता था। उसे तो जीवन बिताने के लिये अच्छी बुरी जैसी भी होती एक स्त्री चाहिये थी। उसी के लिए तो उसने उन कलकतिया आवारा लड़कों से दोस्ती कर रखी थी। लेकिन भला हो उस कलकतिया मित्रों का जिन्होंने उसे शोभना जैसी प्रेम की देवी को सुलभ कर दिया।

छोटू को विश्वास है कि अगर उसकी शादी होती और अगर बहुत कायदे कानून के अनुसार अपने ही जाति में होती तो भी उसे शोभना जैसी अच्छे स्वभाव की और इतनी सुन्दर कहीं न मिलती। उसे मालूम है कि उसके जाति में इतनी सुन्दर, इतनी गोरी कोई लड़की नहीं है।

छोटू अपने जीवन में वर्तमान से अधिक आनन्द की कल्पना नहीं कर सकता।

एक दिन की बात है—

छोटू और शोभना कमरे में थे। खाना-वाना खाने के बाद

इत्मीनान ही था कि छोटू ने शोभना को अपने पास बैठा लिया।

शोभना को कोई आश्चर्य नहीं हुआ ! यह तो रोज की बात थी छोटू सदा ही छुट्टी पाकर शोभना को अपने पास बुला लेता और बातें करता। खासकर प्रतिदिन ही सोने के पूर्व !

आज भी उसने पूछा,

"शोभना एक बात पूछूं !"

शोभना ने उत्तर न दिया, केवल आंखें मिला लीं। यानी उसे आपत्ति भी क्या हो सकती थी !

"शोभना सच बताना, तुमने मुझे इतना सहारा दिया है कि मुझे कभी कभी लगता कि कहीं तुम मुझसे कभी दूर चली गईं तब मैं कैसे रहूंगा ?"

"क्या हो गया है तुम्हें ? कैसी बातें करते हो !" शोभना ने तनिक झिड़क कर कहा।

"नहीं मैं जो पूछता हूं बोलो, मुझे जाने क्यों आजकल कभी-कभी मन में डर लगा करता है कि कहीं तुम मुझसे दूर न हो जाओ।"

"यह क्या इस जीवन में हो सकेगा !"

"विश्वास तो नहीं होता परन्तु जाने क्यों जी डरता है !"

"अच्छा, यह सब कहकर मुझे भी मत डराओ !" कहते हुये शोभना ने अपनी हथेली छोटू के मुंह पर रख दी।

"छोटू भी शोभना को छाती से लगाकर जाने किस बिचार में डूब गया।

दादा को जेल से आए महीनों हो रहे हैं ! दादा के छूटने की

खबर पाकर छोटू ने दादा को फौरन ही एक पत्र भेजा था जिसका उत्तर भी उसे मिल गया था। दादा ने लिखा था।

"सदा ही तुम्हारी चिन्ता घेरे रहती थी। जेल से छूट कर जब यहां आया तो तुम्हारी कोई खोज खबर न मिली! क्या करता, बहुत परेशान था कि तुम्हारे खत ने शान्ति दी। तुमने जिस प्रकार कलकत्ते और पटने में रहकर जीवन विताया उससे अधिक ऐसी परिस्थिति में तुम कर भी क्या सकते थे! लेकिन अगर किसी तरह पढ़ाई चला पाते तो और अच्छा होता। खैर! तुमने केवल इशारा भर किया है पत्र में कि तुमने व्याह कर लिया! लेकिन और कुछ नहीं लिखा। बहू कहाँ की है! कैसे क्या किया। तुम्हारे ससुराल वाले कौन हैं। लेकिन मैं जल्दी ही पटना आऊंगा। तुम वहू को अकेली छोड़कर मत आना। आजकल एलेक्शन का चक्कर है। एलेक्शन हो जाए तो पटना आऊंगा...।"

दादा का यह पत्र जब से आया है, जाने क्यों छोटू के मन में एक उदासी घर करती जा रही है। अभी तक दादा के दूर रहने पर उसे जाने क्यों एक निश्चितता मन में छाई थी। अब उसे लग रहा था कि अगर कुछ दिनों के लिये भी दादा पटना आकर रहने लगे तो उसकी अपनी और शोभना की आजादी में बहुत बाधा पड़ेगी और अगर दादा ने घर चलने को आदेश दिया तव! तब तो उसका इतने दिनों का बनाया आनन्द कानन उजड़ जायगा। दादा के सामने शोभना कैसे रह पायेगी!

उसे यह शायद याद नहीं रहा कि चार बरसों में दुनिया कितनी बदल गई है! यह भी कितना वदल गया है, वड़ा हो गया है। अब

दादा के सामने इतना डरने की उसे जरूरत नहीं और दादा भी उसे अब बच्चे की तरह थोड़े ही रखेंगे।

लेकिन इतना होने पर भी जाने क्यों उसका जी दादा के आगमन की कल्पना करके ही एक अजीब आशंका से भर जाता था।

शोभना भी ऊपरी तौर पर छोटू के मन की अशान्ति का अनुभव करती थी लेकिन इस विषय पर वह छोटू से बात भी क्या करता ?

अचानक एक दिन अखबारों में उसने देखा कि प्रान्तीय धारा सभा के सदस्य के चुनाव में दादा भी जीत गये हैं और अब वे अपने जिले के एम० एल० ए० हो गये हैं। खबर पढ़कर उसे प्रसन्नता हुई। भाग कर उसने यह सूचना शोभना को दी। लेकिन प्रसन्नता का प्रथम उबाल जब समाप्त हुआ और उसने जब अधिक सोचा तो फिर मन पर उदासी छा गई। दादा को अब तो अक्सर ही पटना रहना पड़ेगा और अगर दादा ने उसी घर को अपना डेरा बनाया तब तो सब नष्ट ही हो जायेगा।

छोटू अपनी मन स्थिति अभी सम्हाल भी न पाया था कि एक दिन उसे दादा का तार मिला—"शुक्रवार को आ रहा हूं।"

शुक्रवार को गाड़ी के वक्त छोटू स्टेशन चला गया। जाते समय घर के इन्तजाम के बारे में शोभना को सहेज गया। बाहर का कमरा बिल्कुल ही खाली कर दिया गया, दादा के लिये। एक पलंग डाल दी गई, दो कुर्सियां और एक तिपाई!

सब ठीक-ठाक करके जब छोटू स्टेशन चला गया तो शोभना सोचने लगी कि आखिर दादा के आने की बात से छोटू इस तरह

विचलित क्यों हो गया है ? अपने बड़े भाई के इतने दिनों बाद आने पर जो स्वाभाविक प्रसन्नता होनी चाहिए वह तो तनिक भी नहीं है, बल्कि एक प्रकार का डर उसमें क्यों समा गया है ? वह जितना ही सोचती उतनी ही अधिक आशंका बढ़ती जाती।

शोभना खुद भी आशंका के भंवर में फंसने लगी। यह दादा जैसे कोई प्रलय बनकर उसके और छोटू के शान्त जीवन में प्रवेश कर रहा है।

शोभना जब बहुत घबड़ा गई तो उसने दादा का विचार वहीं छोड़ दिया और उठ जाकर टेबिल पर रखे शीशे के सामने खड़ी होकर बाल ठीक करने लगी। आज शीशे के सामने आकर उसने पहली बार देखा कि कलकत्ते में पहले दिन जब छोटू के पास वह आई थी तब से आज तक में वह खुद कितना बदल गई है। चेहरे पर सदा रहने वाली घबड़ाहट की जगह प्रसन्नता की स्पष्ट रेखाएं हैं। लेकिन क्या अब भी ये रेखाएं बनी रह जायंगी ?

शोभना फिर वही सोचने लगी ! जल्दी जल्दी बाल ठीक किये, जूड़ा बाँधा और नहाने चली गई।

थोड़ी देर बाद दरवाजे पर एक टमटम आकर रुका शोभना तो बाहर के कमरे में ही इन्तजार कर रही थी। किवाड़े खोलकर वह भीतर चली गई और दरवाजे में झाँक कर देखने लगी टमटम वाले ने समान लाकर कमरे में आया। सफेद धोती, कुरता, चप्पल और सिर पर गाँधी टोपी। बुरे तो नहीं लगते थे। देखने पर ऐसा डर नहीं लगता लेकिन छोटू तो इनके साथ होने पर ही जैसे आधा

बुझ गया था। उसकी शोखी, मस्ती जाने कहां गायब हो गई। वह बहुत गम्भीर बना था।

"दादा आप बैठिये मैं नहाने धोने का प्रबन्ध करूं।" छोटू भीतर आया। भीतर आकर उसने शोभना की बाँह पकड़ कर कहा, "आ गये!"

हाँ मैंने देखा। यही दादा हैं!" शोभना बोली।

"हाँ यही हैं। तुम चलकर प्रणाम कर लो न!"

"क्या मैं सामने जाऊं!"

"नहीं तो घर में रहना कैसे सम्भव होगा।"

"ऐसे ही?" शोभना ने अपने कपड़ों की ओर देखकर पूछा!

"और नहीं तो क्या? चलो, चलो अभी बहुत काम है।"

और छोटू के पीछे-पीछे शोभना बाहर के कमरे में आई। दादा सिर की टोपी उतार कर खूंटी पर टाँग चुके थे और कुर्सी पर बैठकर सुस्ता रहे थे कि छोटू के साथ शोभना को आते देखकर एक दम से हड़बड़ा कर उठ गये।

शोभना ने झुककर नमस्कार किया। मुंह से कुछ बोली नहीं। छोटू ने कहा, "शोभना है यह।"

"ठीक है, ठीक है।" कहकर दादा ने हंसने का प्रयत्न किया। शोभना तो क्षण भर बाद भीतर भाग गई। उसे जैसे घुटन हो रही थी और छोटू ने साफ देखा कि शोभना को गौर से देखकर जाने क्यों दादा की आँखें एक अजीब प्रकार की चमक से चमक गईं।

छोटू का जी काँपकर रह गया।

× × ×

एक सौ बावन

दादा एम० एल० ए० हो गये थे न सो सरकार की ओर से उन्हें शीघ्र ही कोई बंगला मिल जायगा। इस खबर से छोटू स्वस्थ था। लेकिन जिस दिन से दादा आये हैं, शोभना जैसे कैदखाने में पड़ गई है। वह पहले की तरह आजादी से रह नहीं पाती। भय का एक साया हर समय उसका पीछा किया करता है।

अक्सर घर में रहते समय दादा से उसकी आँखें मिल जातीं। वह काँप सी उठती और दादा की आँखें हँस देतीं। उसे अजीब सा लगता लेकिन मन को समझाती कि घर के बड़े लोग इसी प्रकार तो स्नेह से देखते हैं न!

छोटू और शोभना एक दूसरे को करुण और आशंका से देखते।

दोनों के लिये आश्चर्य था कि आखिर दादा की उपस्थिति बिना किसी कारण ही इतनी भयानक क्यों हुई जा रही है? जिस दिन से दादा आये हैं छोटू खुलकर शोभना से बातचीत भी नहीं कर पाया है।

तो तुम्हारी पूरी तरह शादी हुई नहीं। तुम लोग यों ही रहने लगे साथ साथ! दादा ने छोटू से पूछा।

"हाँ दादा! क्या करता?" छोटू ने कहा।

इसके आगे बात क्या होती! लेकिन दादा के पूछने का ढंग उसे कुछ अजीब सा लगा।

थोड़ी देर बाद दादा ने फिर पूछा,

"तो जात पाँत का भी अधिक पता न होगा!"

"बंगालिन है..।" बहुत धीरे से कहकर छोटू ने चारो ओर इस प्रकार सशंकित होकर देखा कि कहीं शोभना तो उसकी और दादा की बातें नहीं सुन रही। उसे इस समय घर ही में इस विषय की

चर्चा करना बुरा लग रहा था लेकिन वह दादा से कहता भी कैसे कि वे इस विषय पर बातें न करें !

उस दिन दादा ने कुछ न कहा लेकिन ऐसा लगता था कि जैसे वे सारा दिन उन्हीं के बारे में, छोटू और शोभना के बारे में ही सोचते थे ।

उस रात जब बाहर के कमरे में दादा अकेले सोये और भीतर छोटू और शोभना, तो रात पर दादा को जाने क्यों नींद न आई । वह कुछ देर अपने विषय में सोचते और कुछ देर छोटू के इस जीवन के बारे में । वे सोचते छोटू ने शादी नहीं की । ऐसे ही किसी तरह रख लिया है । यह असामाजिक है, अनियमित । शादी भी कायदे से नहीं की । लड़के बच्चे होंगे तो उनको भी क्या सामाजिक मान्यता मिल सकेगी ? उन्हें रह रह कर लग रहा था छोटू ने सब गलत किया, सब अनुचित और अनियमित किया ।

लेकिन दादा के सामने यह प्रश्न भी था कि अगर आज वे छोटू से कहें तो वह शोभना को छोड़ भी तो नहीं सकता । अगर वह छोटू से दूसरी शादी करने को कहे तो शायद वह कदापि तैयार न होगा । वह देख रहा था कि छोटू और शोभना एक प्राण दो देह हैं उन्हें अलग किया नहीं जा सकता । और आँख के सामने दादा यह बरदाश्त भी तो नहीं कर सकते कि ....

एक बात और थी जिसने दादा को इतना परेशान कर रखा था । वह यह की जब भी वे शोभना और छोटू को देखते तो उन्हें अपना पिछला जीवन याद आ जाता । अगर उन्होंने भी रेणु को अपना लिया होता तो आज उनके जीवन में भी वही मस्ती रहती

जो शोभना और छोटू के जीवन में है। लगता है कि जो सपना दादा अपने जीवन में सच न कर सके उसे छोटू ने सच कर लिया है। उन्हें इसका कोई सन्तोष नहीं था बल्कि एक प्रकार की ईर्षा उनमें धीरे-धीरे अपना घर कर रही थी। वे भी इसका अनुभव कर रहे थे कि छोटू और शोभना की जब भी आकृति उनके मस्तिष्क में आती कि ठीक उसके पीछे उन्हे अपनी और रेणु की छबि दिखाई पड़ती। लगता छोटू की जगह वे खुद हैं और शोभना की जगह रेणु खड़ी है। रेणु अब पहले से अधिक तीव्र बन कर उनके मन में छा रही थी।

उन्हें रह रह कर यही लग रहा था कि जो कुछ वे न कर सके छोटू ने सहज ही कर लिया। और क्या वे जीवन भर अपने असन्तोष को ही लेकर तड़पते रहेंगे! शोभना क्यों उसके परिवार में आकर रेणु को फिर उसके हृदय में जीवित कर रही है। वह रेणु को भूल चुका था, बिल्कुल भुला चुका था। बीच में एक बार देखकर आँख फेर लिया था लेकिन अब तो जैसे जी ही नहीं, आत्मा भी तड़प रही है। क्या अब वह रेणु के बिना रह सकेगा ?

घबड़ा कर उसने घड़ी देखी, रात को दो बज रहे थे लेकिन चिन्ता और परेशानी के कारण उसे नींद नहीं आ रही थी। नींद आती भी कैसे ?

वह क्या सोचे और क्या न सोचे ? रेणु इस घर में आते आते रह गई और शोभना पूरी तरह चली आई। उसे जितना अपने पर क्रोध आ रहा था उससे अधिक छोटू पर। शोभना का उसका यह साथ उसे अपने ही कलेजे पर चलती चक्की की बोझ की तरह

लग रहा था। उसे लग रहा था कि जब रेणु उसके सामने आई थी तब वह उसे बिना शादी किए भी तो अपना सकता था जिस प्रकार बिना शादी किए इतने दिनों से शोभना को छोटू अपनाए हुए है।

उसे लगा कि वह छोटू से साफ कह दे कि जो कुछ वह नहीं कर सका उसे छोटू ही क्यों करे! वह साफ कहेगा कि छोटू शोभना को छोड़ दे!

लेकिन क्या छोटू उसका कहना मानेगा? क्या छोटू पहले की तरह छोटा और दादा पर आश्रित है? अब छोटू कमाता है, अपने मन का राजा है। उसकी बात कदापि न मानेगा?

तभी दादा के मस्तिष्क में एक विचार चमक गया।

क्या यह सम्भव है? क्यों न वह भी इन्हीं में मिल जाए। जब छोटू ने नियमपूर्वक विवाह नहीं किया तो ... ! तो क्यों न वह भी छोटू का भागीदार बन जाए। दोनों भाई, वह और छोटू मिलकर रहें। झगड़े की कोई गुंजाइश नहीं। और यह कोई नई बात न होगी! पांच भाइयों के बीच एक द्रोपदी भी तो थी—और अगर दो भाइयों के बीच शोभना रहे तो क्या कोई हर्ज होगा!

आदमी अपने संतोष के लिए सब कुछ अपने मन का ही सोच लेता है।

जाने क्यों इस विचार से वह धीरे-धीरे रेणु को भूलने लगा। और रेणु की जगह शोभना की सुन्दर, सलोनी, भोली और नई सूरत आज स्थान बनाने लगी।

फिर बाकी रात एक ही बात वह तरह-तरह से सोचता रहा शोभना को वह वही स्थान देगा जो रेणु ने कभी चाहा था। आज

उसकी स्थिति पहले से कितनी अच्छी है। वह देश सेवक है, माना हुआ नेता, हजारों लोग उसकी बात मानते हैं। सरकार में उसकी इज्जत है। वह सम्मानपूर्वक एम० एल० ए० चुना गया है। शीघ्र ही अपनी सरकार में उसे अपना स्थान मिलेगा। हो सकता है वह मन्त्री न बन पाए पर उसकी आवाज से प्रान्त की धारा सभा काँपेगी। उसका इतना प्रभाव है—बड़े छोटे सभी अफसर उससे काँपेंगे। और अगर आज वह किसी छोटी सी बात के लिए छोटू को कहेगा तो क्या वही नहीं मानेगा? वह उसका भाई ही तो है—क्या उसके इस महान प्रभाव का उस पर कोई प्रभाव नहीं है।

नहीं ऐसा नहीं हो सकता। युधिष्ठिर की बात क्या उसके अन्य भाइयों ने कभी टाली थी?

लेकिन यदुवंश को कैसे बताया जाय कि वह अपने को युधिष्ठिर मानने के पूर्व अपने को अच्छी तरह जान लेता तो अच्छा था!

कुछ भी हो, यदुवंश का निश्चय अपना माने रखता है। उसका निश्चय, सचमुच निश्चय होता है।

वह छोटू से सुबह साफ-साफ कह देगा कि या तो वह शोभना को छोड़ दे और अगर नहीं छोड़ता तो उसे वह दोनों भाइयों के लिए सुलभ करे। नहीं तो वह उसे दूसरी शादी करने को, नियम-पूर्वक कानूनी शादी करने को विवश करेगा।

अगर उसे रेणु मिल गई होती तो कोई बात न थी। लेकिन दादा को सता कर वह सुखी नहीं रह सकता। इस प्रकार आँख के सामने छोटू और शोभना का सुख उससे नहीं देखा जाता। ऐसा नहीं कि वह उन्हें सुखी नहीं देखना चाहता पर वह खुद भी सुखी

होना चाहता है ।

शोभना ! उसे जब से देखा है तभी से यदुवंश की आँखों में गड़ गई है । बंगाली लड़कियों में कुछ ऐसा आकर्षण होता ही है जिसे दादा नहीं सम्हाल पाते—वे फिसल ही जाते हैं । शोभना का गोरा, भोला और मासूम चेहरा ! यदुवंश अब उसके बिना नहीं रहेगा नहीं रह सकता !

छोटू को आपत्ति नहीं होनी चाहिए । शोभना उसकी ब्याहता नहीं, उसकी रखेल ही तो है ! और घर में एक की रखेल तो घर भर की रखेल !

यदुवंश का विश्वास था कि जो कुछ वह सोच रहा है वह पाप नहीं होगा ।

रात भर हृदय मंथन करके यदुवंश ने जो भी निर्णय किया था सो कुछ भी सुबह वह छोटू से नहीं कह पाया ।

लेकिन शोभना यदुवंश के हृदय में पूरी तरह समा चुकी थी ।

छोटू से कुछ कहने की जाने क्यों यदुवंश की हिम्मत नहीं पड़ी लेकिन अपने निश्चय के प्रति वह अटल है ।

उस रात को बहुत उदास होकर, आँखों में आँसू भर कर शोभना ने छोटू से कहा,

"एक बात कहूं, बुरा तो न मानोगे ?"

शोभना का मुंह देखकर छोटू तनिक भयभीत हो गया । एक तो दादा के कारण वह हर समय अव्यवस्थित, चिन्तित रहा करता है,

दूसरे शोभना भी इतनी दुखी क्यों हो गई है कि जो थोड़ी बहुत सांत्वना वह शोभना से पाता था वह भी इस समय चिन्ता और आशंका में बदली जा रही है।

इस समय शोभना का सिर सहला कर उसने कहा,

"कहो न, क्या तुम्हारी बातों का कभी बुरा माना है, बोलो, क्या बात है !"

"यही कि······मुझे डर लगता है !"

"क्या ? कैसा डर लगता है।"

"मुझे दादा से डर लगता है। अजीब तरह से वे मुझसे व्यवहार करते हैं। तुम तो दिन भर घर मे नहीं रहते। फिर पानी पान के बहाने दिन भर ही मुझे उनके सामने होना पड़ता है।"

"क्या मतलब ?" छोटू का जी धड़कने लगा।

"तुम्हें कैसे बताऊँ······तुम कुछ नहीं समझते !" कहते-कहते शोभना रो पड़ी, जोर से रो पड़ी।

"शोभना रोकर मुझे अधिक परेशान न करो। मेरा भी जी आजकल बहुत घबराता रहता है, तुम इस प्रकार रोकर मुझे भी मत रुलाओ। साफ साफ बताओ कि क्या बात है ! तुम्हें क्यों डर लगता है ?" छोटू ने किसी प्रकार कहा।

"दादा से मुझे बहुत डर लगता है। वे अजीब-अजीब व्यवहार करते हैं। कहीं और चलो। यहाँ हमारी रक्षा न होगी !"

"दादा क्या करते हैं ?" छोटू ने प्रश्न किया।

"यह न पूछो, तुम्हें मेरी कसम है, मेरे मर जाने की कसम ! यह सब कुछ मत पूछो ! बस मेरी रक्षा करो, मैंने जीवन में तुम्हारे

सिवा किसी को नहीं जाना। मुझे बचा लो। मुझे अकेला मत छोड़ा करो घर में !" शोभना कहती रही और बेतरह रोती रही।

छोटू के पास उसके आँसू पोछने और चुप रहने के सिवा था ही क्या ? वह जान गया कि शोभना कुछ बताएगी नहीं। पूछने पर केवल रोती ही रहेगी। और उसका रोना छोटू से सहा नहीं जाता। वह शोभना को जितना भी जानता है उससे निश्चित है कि वह अधिक खोदने से बिखर जाएगी, टूट जाएगी।

वह उसे सांत्वना देकर शान्त करता रहा। "अच्छा, मैं कल से देखूँगा। तुझे डर नहीं लगेगा। मैं सब ठीक कर दूँगा।"

शोभना बहुत देर तक सिसकती हुई बाद में छोटू की बाहों में मुँह छिपा कर सो गई लेकिन उसकी बातों से छोटू के मन में जो आग लग गई थी वह प्रतिपल बढ़ती गई, बढ़ती गई, वह ज्वाला बनी जा रही थी। आग की लपटों से जैसे उसका अन्तर झुलसा जा रहा हो। वह क्या करे ! कैसे करे !

शोभना के सुख के लिए छोटू अपना सर्वस्व स्वाहा कर सकता है। उसे दुनिया की चिन्ता नहीं—किसी की परवाह नहीं—एक अनजानी लड़की ने आकर उसपर विश्वास करके उसपर अपना सब कुछ निछावर कर दिया। क्या इतना भी कम था ! और अगर उससे प्रतिदान में छोटू उसे सुखी भी नहीं रख सकता तो उसे धिक्कार के सिवा क्या मिलेगा ! शोभना उसके रोम-रोम में समा गई है। और शोभना को अगर कष्ट हुआ, तनिक भी कष्ट हुआ तो उसको अपने शरीर में कष्ट होने लगता है।

आज शोभना को अवश्य ही बहुत कष्ट मिला होगा नहीं तो वह कदापि इस प्रकार विकल होकर न रोती।

छोटू की चिन्ताओं की कोई सीमा नहीं। इधर दो दिनों में ही उसने अनुभव कर लिया है कि पहले के और अब के दादा में कितना अन्तर आ गया है। दादा में पहले जितना ही सीधापन था, सादगी थी, अब उतना ही आडम्बर आ गया है। पहले की सादगी जाने क्या हो गई! पहले जो दादा भर पेट खाना न खाते थे, अब हर समय पान चबाते रहते हैं, मँहगी से मँहगी सिगरेट पीते हैं। पहले नंगे पाँव रहते थे, अब महीन से महीन फीतों वाली चप्पल। पहले जितना मोटा कपड़ा पहनते थे अब उतनी ही महीन और कीमती खादी! यह सब बदलाव ऊपर से तो अच्छा है पर क्या मन से भी वह उतने ही ऊँचे हुए हैं?

शोभना ने जो कुछ कहा, उससे उसे बहुत कुछ समझ में आ गया है। दादा इस नीचता पर क्यों उतर आए हैं! अपने जीवन में सदा ही उसने दादा को माता-पिता के स्थान पर अपना पूज्य मानता रहा है लेकिन अवश्य ही कोई बात होगी तभी तो अब दादा को देखकर उसे अब वैसी श्रद्धा नहीं होती।

उसने मन ही मन सोचा कि कल सुबह ही दादा से वह कह देगा कि दादा उसपर कृपा करके कोई अच्छा बंगला अपने लिए ले लें और उसकी छोटी सी गृहस्थी में उत्पात न करें। वह और शोभना अब एक हैं और सदा ही एक रहेंगे। दादा क्या, संसार की कोई भी शक्ति उन्हें अलग नहीं कर सकती। और अगर दादा उनके बीच आवेंगे तो विवश होकर उसे दादा का अपमान ही करना पड़ेगा।

आज तक उसने दादा के सामने मुंह नहीं खोला लेकिन अब विवशता आ जाएगी ।

और जो कुछ उसके दिल पर गुजर रहा था, क्या उसके कारण उस रात छोटू को नींद आ सकती थी !

और सुबह से ही छोटू मन ही मन क्रुद्ध था । बचाता था कि कहीं आज ही दादा से कुछ होकर न रहे । चाय पीते समय दादा ने कहा, "छोटू, मुझे एक बंगला मिल गया है सरकार से । मैं सोचता हूँ कि तुम लोग भी चल कर वहीं आराम से रहो । यहाँ किराया देकर भी कच्चे मकान में रहने से क्या लाभ ?"

छोटू पहले तो चुप रहा पर जब दादा ने फिर कहा तब वह जैसे उबल पड़ा, "आप अवश्य ही उस बंगले में चले जाएँ । लेकिन हम लोग यहीं रहेंगे । हम लोग वहाँ न जाएँगे ।"

"क्यों ?" दादा ने प्रश्न किया ।

छोटू के मन में आया कि वह कह दे कि वह उनके साथ नहीं रहना चाहता इसीलिए नहीं जाएगा । अब उसे उनपर श्रद्धा नहीं होती । उसके मन में दादा के लिए अब वह जगह नहीं जो पहले थी । वह यहीं रहेगा । लेकिन उसने संघर्ष बचाने को केवल इतना कहा,

"हमलोग यहीं रहेंगे । वहाँ हमारा काम चलने में मुश्किल होगी । क्योंकि सभी ग्राहक यही घर जानते हैं । वहाँ भला कौन जाएगा ।"

लेकिन दादा सीधे मानने वाले न थे । बोले, "अब तुम काम की इतनी चिन्ता मत करो । अपने आप जो आएगा वहीं ठीक है । नहीं तो

अब मैं जो हूं। क्या केवल तुम्हारा और शोभना का ही खर्च बहुत होगा ? सब मैं सम्हाल लूंगा। जब तक मैं नहीं था तब तक चाहे जैसे तुमने चलाया। लेकिन अब मैं जैसा कहूं वैसा करो। काम की फिकर छोड़ दो। ....और.........और तुम्हें मेरी इज्जत का भी ध्यान रखना है। लोग जब सुनेंगे कि श्री यदुवंश बाबू एम० एल० ए० का भाई मिस्त्री है तो भला क्या कहेंगे ? थोड़ा तुम रुक जाओ फिर मैं रुपये लगाकर तुम्हें यहीं बिजली के सामान की अच्छी सी दूकान ही खुलवा दूंगा फिर तुम अपने मे केवल दूकान देखना और बाहर के काम के लिए एक मिस्त्री रख लेना। समझे, सब काम ढंग से होता है।"

छोटू कड़ुई दवा की तरह एक एक बात पी रहा था। रह रह कर उसका जी हो रहा था कि साफ साफ दादा से कह दे लेकिन ऐसा वह न कर सका। जाने कौन सी शक्ति उसे अब भी दादा के सामने पूरी तरह खुलने से रोक रही थी। अनेक बार मन में आया कि दादा से वह कह दे कि दादा अब यह माया जाल अधिक मत फैलाइए। मैंने जब इतना कर लिया तो साल दो साल में अपनी दूकान भी कर लूंगा। आप की इज्जत जैसे भी होगी बचा लूंगा। और अपने आप हाथ से कोई भी काम करने से किसी की भी इज्जत नहीं जाती। सो चला लूंगा। आप भर मेरे जीवन को तोड़ने की कोशिश न कीजिए।

लेकिन प्रत्यक्ष में उसने केवल यह कहा,

"अभी तो दादा, मैं यहीं रहूंगा, फिर बाद में देखा जाएगा।"

दादा ने फिर देखा कि छोटू का चेहरा बिगड़ रहा है, अधिक कहने से वह शायद खुल कर विरोध करे। इसीलिए चुप रह गये। सोचा फिर किसी समय समझाऊंगा।

और उस दिन की सारी बातें छोटू ने शोभना को बता दिया कि दादा के साथ जाने से उसने इन्कार कर दिया है। दादा जल्दी ही दो चार दिनों में चले जाएंगे। यह सुनकर शोभना को बड़ी शांति मिली। वैसी ही शांति जैसे उसकी रक्षा किसी बड़े पिशाच से कर दी गई हो।

इसके बाद ही छोटू चला गया। उसे कहीं जल्दी ही काम पर जाना था।

दादा भी कहीं बाहर गए लेकिन घंटा भर बाद ही वे लौट आए। आकर उन्होंने दरवाजा खटखटाया। शोभना ने दरवाजा खोला और भीतर वापस चली गई।

दादा ने दरवाजा खुलते ही शोभना को देखा तो जाने क्यों बहुत बेचैन हो गए। लगता था कि शोभना ताजी ताजी नहा कर आई थी नहा कर साफ कपड़े पहने थी। चेहरे पर क्रीम भी लगाई थी क्योंकि दरवाजा खुलते ही खुशबू की एक लहर दादा के नासा-पुटों में समा गई थी और दादा का सिर चकरा देने को इतना काफी थी। शोभना का ताजा चेहरा ताजे गुलाब की तरह स्वच्छ हो कर खिल गया था। इस बात से वह बहुत प्रसन्न भी तो थी कि दादा अब अलग जाकर रहेंगे और उसका जीवन फिर पहले की तरह हो जायगा। और इसके कारण उसके चेहरे की चमक अद्वितीय हो गई थी।

दादा जाने क्यों शोभना का यह रूप देखकर बहुत अधिक विचलित हो गए। वे भूल गए कि आज ही सुबह छोटू ने करीब २ साफ ही कह दिया था कि वह उसके साथ नहीं रहेगा। इतना दादा को समझ लेने के लिए काफी था और दादा समझ भी गए थे लेकिन जब किसी का मस्तिष्क अपनी जगह से टल जाता है तो कोई करे भी तो क्या!

दादा इस समय फिर बहुत विचलित हो गए थे। उन्हें मालूम था कि छोटू बहुत देर से लौटेगा। इस विचार से उन्हें और ताकत मिली। मन में आया कि एक बार शोभना से भी सीधी बात करके फैसला कर लिया जाय। जाने क्यों उन्हें यह विश्वास था कि शोभना के सामने अगर एक बार वे खुल जाँएगे तो शोभना शायद उनका कहना मान जाएगी। उन्हें विश्वास था कि शोभना पर छोटू का जो प्रभाव है वह उसके अपने मान और प्रतिष्ठा से समाप्त हो जायगा। उसे विश्वास था कि शोभना बिना शादी किये ही इतने दिनों से छोटू के साथ पत्नी का सम्बन्ध निभा रही है तब वह भी उस पर अधिकार करके उसके साथ छोटू जैसा ही संबंध स्थापित कर सकता है। शादी यदि हुई तो शायद शोभना विरोध भी करती लेकिन जब वह किसी एक की हो सकती है तो दूसरे की होने में उसे आपत्ति क्यों होगी? फिर वह समझेगी भी तो कि छोटू के साथ उसे अधिक आराम नहीं। कच्चा मकान, मोटा खाना, मोटा पहनना, दिन भर मिहनत! और उसके साथ बंगले का जीवन, नौकर चाकर, दिन भर मस्ती। खर्च करने को काफी रुपया, मान, प्रतिष्ठा, इज्जत, सभा सोसाइटी सब कुछ!

स्या इतने के लिये भी वह छोटू को न छोड़ेगी ! और वह यह भी तो नहीं चाहता कि शोभना छोटू को छोड़ ही दे। छोटू की बनकर वैसी ही रहे जैसी अभी है। उसके अलावा उसकी भी बन जाय बस ! जीवन में दादा को जो चोटें पड़ी हैं वह साफ हो जायेंगी। रेणु न सही, शोभना सही, उसके घर की मालकिन एक बंगालिन हो सकेगी।

इन विचारों ने उसे जैसे बेहया बना दिया था। उससे अधिक न रहा गया। उसने पुकारा, "शोभना !"

शोभना आँगन में कोई काम कर रही थी। हाथ का बरतन गिर पड़ा। इस प्रकार नाम लेकर दादा ने कभी नहीं पुकारा था। आज यह नई बात क्यों ? उसका जी धक् धक् करने लगा। लेकिन जब पुकारा था तो उसे उत्तर भी देना ही था। विवशता थी।

जाकर किवाड़ की आड़ में खड़ी होकर उसने बहुत धीरे से कहा, "जी !"

"शरमाने की बात नहीं है। सामने आ जाओ, तुमसे कुछ बातें कहनी हैं।"

शोभना अब क्या करे ? अज्ञात आशंका से उसका जी बुरी तरह काँपने लगा। लगा कि किसी ने उसका कण्ठ पकड़ लिया है। उसकी आवाज किसी ने बाँध दी है।

दरवाजा खोलकर सामने वह आ गई, देह को धोती को सम्हालते हुये।

दादा एक कुर्सी पर बैठे थे। उन्होंने इशारा किया, "कुर्सी खींच कर बैठ जाओ, बातें करनी हैं!"

"मैं ठीक हूं आप कहें!" शोभना ने कहा।

"अच्छा, अच्छा! शरमाती हो!" दादा ने दाँत दिखा कर कहा, जैसे हँसने का प्रयत्न कर रहे हों? "तो इतना तुम मुझसे शर्म क्यों करती हो, शोभना! अब तो हम लोगों को जीवन भर साथ ही रहना है न!"

शोभना को लगा कि उसे चक्कर आ जायगा। वह हाँ या ना कुछ भी न बोल पाई।

दादा ने कहा, "मैं पूछता हूं कि आखिर बात क्या है कि तुम इस प्रकार मुझसे कतराती हो। मैं जितना ही तुम्हें......।"

"आप......!" बीच ही में शोभना ने कुछ कहना चाहा लेकिन रुक गई। उसका गला अभी तक फँसा ही था। बड़ी हिम्मत करके उसने कुछ कहना चाहा था जिसे न तो कह ही पाई न दादा समझ ही पाये।

शोभना मन ही मन मना रही थी कि किसी प्रकार इस समय छोटू आ जाता। तभी शायद उसे वह सम्हाल पाता। जानें क्यों उसे बेतरह डर लग रहा था। घर सूना, दादा बातें कर रहे हैं, जीवन भर साथ रहने को!. भविष्य क्या है, वह काँप गयी।

लेकिन छोटू नहीं आया।

दादा एक बार उठे और उसी कुर्सी पर फिर बैठ गए। शोभना

सिर नीचा किये चौखट पकड़े खड़ी रही। अगर चौखट का सहारा न होता तो वह निश्चित ही मूर्छित होकर गिर पड़ती।

क्षणभर बाद दादा ने कहा, "शोभना, तुम लोग मेरे साथ बँगले पर रहने के लिये क्यों नहीं चलते ?"

शोभना ने सोचा कि चुप रहने से कोई लाभ नहीं, बात को बात से समाप्त करना चाहिये। उसने .धीमें से कहा, "मुझे क्या मालूम ? उनकी जैसी इच्छा हो।"

इसके आगे दादा भला इस विषय पर क्या कहते, सो उन्होंने सीधी बात शुरू की।

"शोभना मैं देखता हूं तुम्हें यहाँ काफी कष्ट है।"

"नहीं मैं जैसी भी हूं बिल्कुल खुश हूं। और मुझे क्या चाहिये ?"

"नहीं, अगर बिना चाहे भी कुछ सुख सुविधा प्राप्त हो जाये तो क्या बुराई है ?"

शोभना चुप रही, अपने धड़कते हृदय को सम्हालती हुई। हे भगवान, क्या होने वाला है ! वह काँप-काँप उठती।

दादा ने फिर, "मेरे साथ चलो, मेरे साथ रहो। तुम्हें कोई तकलीफ न होगी। नौकर-चाकर होंगे, सब इज्जत मानेंगे।"

शोभना फिर भी चुप रही। दादा ने समझा शोभना रास्ते पर आ रही है। उनकी हिम्मत बढ़ी—

"साफ-साफ कहूं शोभना ! तुम्हें मुझमें और छोटू में कोई अन्तर नहीं मानना चाहिये। बल्कि तुम्हें यह समझना चाहिये कि

वह मेरा छोटा भाई है। मेरी खुशी ही उसकी खुशी होगी। वह भला इसमें आपत्ति क्यों करेगा? और अब उसे तो मेरा आश्रित ही बनकर रहना है न!"

शोभना की चुप्पी से उसका दिल बढ़ता जा रहा था।

"तुम मेरी होकर रहोगी। तुम्हें किसी सुख की कमी न होने दूंगा।……जानती हो न! जिस दिन से तुम्हें देखा है जाने क्यों तुम पर ही सारी आशाएं बाँध दी हैं। तुम नहीं जानती रेणु भी बिल्कुल तेरी ही तरह थी। वह मेरी थी, तुम भी मेरी बन जाओ। मैं तुम्हारे बिना रह जो नहीं सकता…।"

कहते-कहते दादा एक दम से उठे। और आगे बढ़कर शोभना का हाथ पकड़ लिया।

शोभना को लगा जैसे हाथ ही नहीं पकड़ा, किसी अजगर ने उसके सारे शरीर को लपेट लिया है। उसे लगा कि उसे मूर्छा आ रही है। अब वह नहीं सम्हल सकती।

दादा कह रहे थे, "तुम्हें मेरी होकर रहना पड़ेगा। शोभना मैं घर का मालिक हूं। मैं जो चाहूंगा…"

बस इतने ही शब्द दादा के उसके कानों ने सुना। फिर उसे कुछ होश नहीं।

शोभना का शरीर गिरने लगा तो दादा ने घबड़ा कर उसे सम्हाला। अरे यह तो बेहोश हो गई!

अब दादा के घबड़ाने की बारी थी।

यह बेहोश हो गई! यह इतने कमजोर दिल की है? अब कैसे

हो ? उसका बेहोश शरीर उठा कर दादा ने जल्दी ही उसी कमरे में उसी की खाट पर लिटाया। कोई और अवसर होता तो निश्चय ही दादा को शोभना का शरीर छूने में जाने कितना रोमांच होता। लेकिन इस समय रोमांच होने का कोई अवसर न था। दादा के प्राण छटपटा रहे थे कि कहीं इसकी बेहोशी के ही समय छोटू आ गया तब तो अनर्थ, महान अनर्थ हो जायगा। फिर छोटू जाने क्या-क्या समझेगा ! वह कैसे क्या समझायेगा !

यदुवंश बेतरह घबड़ा गया। सचमुच अब क्या हो !

दौड़कर यदुवंश ने एक गिलास में पानी लाकर शोभना के चेहरे पर छींटा मारा।

थोड़ी ही देर में वह होश में आ गई।

उसने आँखें खोल कर चारों ओर देखा। देखा, दादा हाथ में गिलास लिये खड़े हैं। घबड़ा कर वह फिर उठने लगी। लेकिन वह इतनी शिथिल और कमजोर हो गई थी कि उठ भी नहीं सकी। लेकिन जब उसकी घबड़ाहट दादा ने देखा तो वे बोले,

"तुम पड़ी रहो, आराम से रहो। मैं चला जाता हूं।"

और सचमुच गिलास वहीं रखकर फौरन बाहर की ओर गये और बाहर का दरवाजा खोलकर सड़क पर चले गये।

दादा बदहवास बिना किसी उद्देश्य ही सड़क पर चलते गये उनके मन में बड़ा तेज तूफान उठा था। यह क्या से क्या हो गया ! उसे लग रहा था कि शोभना पर उसने अत्याचार किया। अब वह अवश्य ही छोटू से कहेगी, सच कहेगी, जाने क्या कहेगी, फिर छोटू के सामने वह अब कैसे जायेगा !

दादा यह सब जितना ही सोचते उनका मस्तिष्क फटा जा रहा था उनके पाँव मशीन की तरह तेजी से चलने लगते।

दादा किधर जा रहे थे, कहाँ जा रहे थे, उन्हें ही नहीं मालूम!

दिन को कितनी देर तक शोभना यों ही पड़ी रही, उसे नहीं ज्ञात। किसी प्रकार उठकर उसने घर का काम करने की कोशिश की लेकिन उसके हाथ पाँव चलते ही न थे। विवश होकर वह फिर उसी तरह आकर अपनी खाट पर लेट गई।

तीन चार बजे के करीब छोटू आया। बाहर का किवाड़ खुला था और वहीं से उसका जी धड़कने लगा, किवाड़ क्यों खुला है, क्या बात है, ऐसा तो कभी नहीं हुआ।

सीधा बैठक का कमरा पार करके वह भीतर गया। खाट पर शोभना को बिछी सी देखकर ही उसका जी घबड़ा उठा। अनेक प्रकार की जाने कितनी ही शंकाएँ उसके दिमाग में घुस आईं।

आगे आकर उसने शोभना के सिर पर हाथ रखा। अरे इसे तो हल्का सा बुखार लगता है, माथा गरम है।

सिर पर हाथ पड़ते ही शोभना चीख उठी। वह डर कर चीखी थी! क्या फिर दादा आ गये?

कि तभी छोटू ने कहा, "क्या बात है शोभना! मैं हूं, डरती क्यों हो?

छोटू की आवाज सुनते ही शोभना में जाने कहाँ से खोई शक्ति

वापस आ गई। बिजली की तेजी से वह उठी और छोटू से लिपट कर वह बहुत तेजी से रोने लगी !

एक मिनट तो छोटू की समझ में न आया कि क्या बात है। वह खुद परेशान सा शोभना की पीठ सहलाता रहा ! फिर बोला,

"शोभना, बोलो न बात क्या है, इस प्रकार बेतरह क्यों रो रही हो ?"

शोभना का रोना थोड़ा थमा। उसने कहा, "मैंने तुमसे कहा था न कि मुझे घर में अकेला मत छोड़ा करो।"

सुनते ही एक निश्चित आशंका से वह काँप उठा। क्या हो गया ? उसने घबड़ा कर पूछा, "क्या हुआ ?"

"दादा ने मुझे बहुत तंग किया !" कहकर वह फिर रोने लगी।

"क्या किया ?"

"मैं तो बेहोश हो गई थी ?" वह रोती रही।

"दादा कहाँ हैं ?" गरज कर छोटू ने पूछा।

"उसी वक्त कहीं चले गये !"

"चले गये ! अच्छा अब आने दो……। वह मेरा दादा नहीं, शत्रु है। आज खून पी लूँगा। मार डालूँगा। उसने क्या किया ? साफ-साफ बताओ मुझे !"

"मैं बेहोश हो गई थी ! इसीलिये शायद—नहीं तो अवश्य ही कुछ करता !"

छोटू का खून तेजी से दौड़ रहा था, उसकी नसें जैसे फड़फड़ा रही थीं। अब क्या करे, कहाँ पावे दादा को ? आज वह दादा को

बता देगा कि उसे छेड़कर उन्होंने शेर को छेड़ा है। दादा इतना नीच है? इतना घृणित! इतना पतित!

लेकिन उसे कौन सम्हाले? वह तो शोभना को सम्हाल रहा था। उसके कलेजे में भी तो आज आग की लपटें थीं, उन्हें कौन सम्हाले!

वह शोभना को सांत्वना दे रहा था, समझा रहा था। आज वह सब कुछ फैसला कर लेगा! कुछ बाकी न छोड़ेगा।

शोभना शान्त हुई। उसने डर कर कहा,

"आज मैं खाना नहीं बना सकी।"

"अच्छा किया, मैं बाजार से लाऊँगा। तुम पड़ी रहो। चिन्ता मत करो! तुम्हारा जी ठीक नहीं।"

क्षण भर शोभना पड़ी रही। उसे अब लग रहा था कि जैसे धीरे-धीरे उसकी शक्ति वापस आ रही थी। छोटू की उपस्थिति ही उसके लिये अभयदान थी।

उसने कहा, "सुनो, मेरी बात मानोगे?"

"क्या?"

"मुझे थोड़े दिनों के लिये कहीं और भेज दो। जब तक दादा यहाँ रहें! मैं फिर आ जाऊँगी!"

"ऐसा क्यों आज मैं उन्हें ही बताऊँगा। तुम क्यों जाओ?"

शोभना ने क्षण भर बाद कहा, "सुनो, दादा ऐसे क्यों हैं?"

"ऐसे हो गये हैं, शोभना! जाने क्यों? पहले ऐसे नहीं थे।"

"वे कांग्रेसी हैं न! सुना है कांग्रेसी अच्छे···।"

"हाँ वे कांग्रेसी हैं लेकिन जैसे हैं सो भी देख रहा हूं। क्या

बताऊँ। शोभना तुम नहीं जानतीं कि दादा पहले कैसे थे, नहीं तो तुम्हें उनके आज के रूप पर उसी तरह विश्वास न होता जैसा मुझे नहीं हो रहा है। सब कुछ आँखों से देखकर भी एक बार विश्वास करने का जी नहीं होता, शोभना! लेकिन आज मैं फैसला करके ही रहूंगा। उन्हें जहाँ जाना हो चले जायँ, आज ही चले जायँ, मुझे उनकी कोई भी परवाह नहीं।"

शोभना ने सांत्वना देना चाहा, छोटू को सम्हालना चाहा: "इस प्रकार लड़ाई करने से क्या फायदा?"

"तो क्या करूँ?"

"उन्हें समझा दो न!"

"वे क्या नहीं समझते जो समझा दूँ। बेकार की बात। सीधी उँगली घी नहीं निकलता। समझीं।"

"सुनो! दादा तो देशसेवक हैं, त्यागी हैं, लेकिन ऐसे क्यों हैं?" शोभना ने पूछा।

छोटू खीझ गया। झुँझला कर बोला, "कहा न कि सब कुछ हैं वे, बहुत महान हैं, लेकिन उनके ये नीच कर्म भी तो सामने हैं। क्या उसके बाद उन्हें कोई इन्सान कहेगा? वे तो दानव हो गये हैं।"

मुँह बना कर छोटू चुप हो गया। शोभना ने देखा कि छोटू बहुत अधिक उलझन में है। उसे और छेड़ने से वह नाराज हो जायगा इसलिये चुप रही।

उस शाम शोभना को छोटू ने काम नहीं करने दिया। वह

बाजार से खाना न आया।

और दादा उस रात भी वापस न आये। छोटू क्रोध और आवेश में सारी रात बैठा उनकी इन्तजारी करता रहा।

उस रात न शोभना सो पाई न छोटू। शैतान का साया जो उनके घर में घुस आया था, वह उन्हें काफी परेशान कर रहा था। उस साए को वे आज अवश्य ही साफ कर देंगे!

लेकिन उस रात दादा नहीं आये, नहीं आये!

दादा की हिम्मत न पड़ी कि फिर छोटू के घर जाते। जाने शोभना ने छोटू से क्या क्या कहा हो और उस पर जाने क्या प्रभाव पड़ा हो ! वहाँ पर जाने क्या दृश्य उपस्थित हो !

रात तो उसने अपने एक काँग्रेसी मित्र के यहाँ काट ली। और दूसरे दिन सुबह ही अपने मित्र के नौकर को भेज कर छोटू के यहाँ से अपना सामान मंगा लिया कि यहाँ से सीधे वे अपने नये बंगले में ही जाएँ।

छोटू ने सामान फौरन ही भेज दिया।

फिर हफ्तों छोटू और दादा का सामना न हुआ। दोनों ही जानबूझ कर एक दूसरे से दूर रहे !

दादा में एक नई प्रवृत्ति यह आ गई है कि वह सभी बातें बड़ी जल्दी मन से भुला देने से सफल हो जाते हैं।

महीनों के कालान्तर से वे अब छोटू और शोभना को करीब करीब भूल गये हैं। वे उनके विषय में अधिक नहीं सोचते। क्योंकि उन्हें विश्वास हो गया था कि वे शोभना पर असर नहीं डाल सकेंगे और वहाँ उन्हें सफलता भी नहीं मिल सकती। अतः वे अपने मन से उसका विचार भी निकाल ही देना चाहते थे।

यदुवंश अपने नये बंगले में बड़े ठाट का जीवन बिता रहे हैं। एक नौकर है जो खाने पीने के प्रबंध के अलावा दादा के हर सुख-सुविधा का भी ख्याल रखता है। उनके घर का वही प्रबंधक है। और यहाँ एकान्त में वे अपने मन जैसा जीवन काट रहे हैं। एसेम्बली की बैठक के अलावा रोज ही कहीं न कहीं पार्टी, दावत या मिटिंग रहती ही है। बड़े और राजनीतिक व्यक्ति हैं अतः सरकार में बहुत असर हैं। शहर की हर बड़ी छोटी सभा, उनकी उपस्थिति के बिना सूनी रहती है।

अपने जिले के एक मात्र नेता और एम० एल० ए० होने के कारण सेक्रेटेरियट के सभी अफसर इनका मान रखते हैं। सभी को यह डर रहता है कि कहीं ये एसेम्बली में प्रश्न कर देंगे, किसी भी बात को लेकर, तो बेकार ही लेने के देने पड़ जायँगे।

यदुवंश के इसी प्रभाव के कारण उनके यहाँ दिन भर लोगों की भीड़ लगी रहती है जो किसी न किसी सरकारी काम में दादा के प्रभाव का उपयोग करना चाहते थे।

किसी को बस सर्विस के लाइन का लाइसेंस चाहिये। किसी

को कपड़े का, किसी को गल्ले की दूकान का परमिट चाहिये। किसी को अपने बेटे या भाई को कोई नौकरी दिलानी है। किसी को अपना ओहदा बढ़वाना है। यानी जिसको भी जो काम हो, दादा को साथ ले ले, सब काम आसानी से हो जायगा।

और ऐसा नहीं कि दादा को यह सब करने में कोई अधिक परेशानी उठानी पड़ती हो दादा को ऐसे कामों में काफी मजा भी आता है। अब तक इस प्रकार की शिफारिसें करते-करते यदुवंश अच्छा मालदार आदमी बन गया है। जैसे एक जिले की बस सर्विस में उनका आधा साझा है। एक सेठ को जब कपड़े और गल्ले की दूकान का परमिट दिलाया था तब उससे लिखा-पढ़ी करके इन्हें भी चार आने का मालिक बना दिया है।

इस प्रकार दादा को ठीक से याद भी नहीं कि उनका कितना कारबार फैल चुका है और कितना कहाँ उनका भाग है। हर जगह से हिस्से का रुपया स्वाभाविक गति से अपने आप चला आता है। दादा का 'बैंक बैलेंस' बढ़ता जा रहा है।

इस प्रकार दादा के यश और धन दोनों की दिन दूने रात चौगुने वृद्धि हो रही थी।

लेकिन दादा को केवल इस बात का दुःख था कि यह सब भोगने वाला कोई नहीं। अकेले यदुवंश कहाँ तक क्या खर्च करे, क्या सुख पावे!

लेकिन इसका कोई इलाज भी आज उसे नहीं दिखाई पड़ता।

एक दिन दादा अपने कमरे में बैठे एसेम्बली में होने वाला

अपना भाषण तैयार कर रहे थे कि उनके नौकर ने आकर बताया कि एक मेम साहब आई हैं।

"क्या, मेम साहब ! क्या मोटर पर हैं ?"

"नहीं बाबू ! रिक्शा-पर हैं !"

यदुवंश का जी धड़कने लगा। कौन हो सकती है ? झटसे उठे और खूंटी पर टंगे कुरते को उतारकर पहन लिया। फिर शीशे में चेहरा देखकर बाल भी ठीक कर लिये ! तब नौकर से कहा, "यहीं बुला लो, लेकिन पहले एक कुर्सी रख जाओ !"

और थोड़ी देर बाद जिस रमणी को साथ लिवा कर नौकर भीतर आया उसे देखते ही दादा जैसे लड़खड़ा गये।

"अरे तुम रेणु ! तुम अचानक यहाँ कैसे ?"

"आप को ही खोज रही हूं दो दिनों से ?" मुस्कुराकर रेणु ने कहा।

नौकर तो फौरन ही बाहर चला गया।

यदुवंश का जी बुरी तरह धड़क रहा था। यह फिर कहाँ से आ गई ! कैसे आ गई। रेणु ही तो है ! वह सपना तो नहीं देख रहा न ! रेणु, रेणु !

उसके मस्तिष्क का रक्त खट खट बजने लगा।

"यदुवंश जी, आप ने मुझे पहचान लिया ?" अपने आप खाली कुर्सी पर बैठती हुई रेणु ने पूछा।

"वाह, तुझे भी क्या कभी भूल सकता हूं। और ऐसा क्यों सोचा कि तुझे मैं पहचानूंगा नहीं !"

यदुवंश ने कह तो दिया लेकिन उन्हें लग रहा था कि रेणु

कितनी बदल गई है। सचमुच मेम साहब हो गई है। यह पहनाव ओढ़ाव, यह छवि! चेहरे पर यह भराव, यह लाली! सारी देह का स्वस्थ सौंदर्य! यह उभार और यह सौंदर्य। पहले यह दुबली पतली लगती थी अब कितनी गोल मटोल हो गई है। पहले दो चोटी करती थी अब कसकर बड़ा सा जूड़ा।

यदुवंश जाने किस प्रकार देखता रहा कि रेणु झेंप गई। यदुवंश को लग रहा था कि यह रेणु आखिर क्या करना चाहती है? क्यों बार बार वह उसके जीवन में घुस आती है। जब भी जीवन तनिक शांत होता है अपने रास्ते पर चलने लगता है कि यह आकर हिलोर पैदा कर देती है। इतना ही नहीं जब तब आकर, उसके अन्तर में हाहाकार मचाकर वह चली जाती है उसके बाद उसे फिर अपना जीवन संतुलित करने में कितनी कठिनाई पड़ती है। इसे कौन जाने।

उसने अपने को तनिक संयत करके पूछा: "आखिर तुम कहाँ से टपक पड़ीं रेणु।"

रेणु को यदुवंश का आज का व्यवहार सदा से भिन्न लग रहा था। रेणु ने समझा था कि पहले भी जिस प्रकार यदुवंश मिलता रहा है, उल्टी पुल्टी बातें करता रहा है और बात में ही जैसे पिंड छुड़ा कर भाग जाता रहा है उसी प्रकार शायद आज भी हो। पर ऐसा तो नहीं हुआ। क्या यदुवंश में इतना बदलाव सम्भव है। उसने यदुवंश को विद्यार्थी के रूप में, मामूली कांग्रेसी कार्यकर्ता के रूप देखा था और आज प्रसिद्ध नेता और एम० एल० ए० के रूप में भी देख रही है।

तीनों रूप। तीन तरह के रूप, उसने सब देखे हैं। आज सच-मुच यदुवंश में बदलाव आ गया है। शायद पद का मद यही होता है। पद बढ़ता है तो आदमी का व्यवहार अवश्य ही बदल जाता है। आज यदुवंश की गिनती प्रान्त के कुछ प्रभावशाली लोगों में है; उसकी गिनती प्रान्तीय धारा सभा में दहाड़ने वाले शेरों में है। और इतना ही बदला तो क्या बदला।

रेणु ने मुस्कुराकर बहुत कोमल बनकर कहा, "आप से ही मिलने पटना आई हूं। आप चाहे मुझे भूल जायँ लेकिन मैं नहीं भूलूंगी। आपको इतना तो विश्वास होना ही चाहिये।"

"यों तो मैं भी नहीं भूला हूं।"

"नहीं आप अब बहुत बड़े, प्रभावशाली आदमी हो गये हैं।"

सुनकर यदुवंश जरा अकड़ कर बैठ गया। बोला कुछ नहीं जैसे जीवन में पहली बार किसी ने यह सत्य प्रकट किया हो। वह मन ही मन फूल रहा था। फिर थोड़ी देर बाद पूछा।

"कहो, आईं कैसे ? तुम्हारे पति तो एस० डी० ओ० हैं न ?

"हाँ, उनके डिप्टी कमिश्नरी की बात थी लेकिन एक ऐसी बात हो गई कि सब खटाई में पड़ गया। इसलिये आपकी मदद लेने आई थी।"

"क्या हुआ ?"

"अब क्या बताऊं !" रेणु ने लम्बी साँस खींची।

"बोलो, बोलो, क्या बात है, मैं क्या कर सकता हूं ? मैं तुम्हारी मदद हर प्रकार से करूंगा। बोलो भी क्या हुआ है ?"

"बात यह हुई कि शहर के एक सेठ से उनका कुछ झगड़ा हो

गया था। उन्होंने उसे 'ब्लैक मार्केट' करते हुये पकड़ा। कपड़े में "ब्लैक मार्केट!' उस पर मुकदमा चल रहा है। लेकिन वह इतना बदमाश निकला कि उसने 'होम मिनिस्टर' के यहाँ यह 'एप्लीकेशन' दिया कि उसके इस प्रकार के 'ब्लैक मार्केट' में एस० डी० ओ० साहब का साझा रहा है और उसने कुछ रकम भी एस० डी० ओ० साहब को दी है। सो मामले की 'इन्क्वारी' हो रही है।"

'हाँ, हाँ, यह 'केस' तो सुना था। मिनिस्टर के यहाँ ही सुना था। तो वह तुम्हारे पति का मामला है? अच्छा एक बात बताना कि इसमें कितनी सच्चाई है?' कुटिल हँसी-हँसी कर यदुवंश ने पूछा।

क्षण भर तो रेणु चुप रही। यह बात करते-करते उसका चेहरा उतर गया था। वह यदुवंश के प्रश्न का क्या उत्तर दे। अन्त में उसने उदास होकर कहा, "अब सच्चाई तो मुझे नहीं मालूम पर अगर कुछ गड़बड़ हो गया तो क्या होगा? हमारी छोटी सी गृहस्थी।"

रेणु का गला भर आने लगा था। यदुवंश ने बीच में ही टोका, "कोई बात नहीं, यह सब होता रहता है। मैं मिनिस्टर से कह दूंगा। कुछ नहीं होगा। तुम चिन्ता मत करो। जब तुमने यहाँ तक आने का कष्ट किया है तो मैं भी तुम्हारा कोई नुकसान नहीं होने दूंगा। हाँ तुम्हारे बच्चे कितने हैं?"

रेणु को यदुवंश की बात से जितना धैर्य बंधा था, अंतिम वाक्य से वह उसी प्रकार चौंक पड़ी। यह प्रश्न उसे बहुत ही अजीब और अस्वाभाविक सा लगा, लेकिन उसने बनावटी हंसी हँसकर कहा,

जैसे बहुत शरमा रही हो, अब आपको अपने यहाँ ले चलूँगी तभी सबों को देखियेगा।"

क्षण भर की शान्ति के बाद अतीत की स्मृतियों में डूबते हुये यदुवंश ने पूछा, "गाँगुली बाबू का क्या हाल है रेणु ? देख न, इतने दिनों से पटना में हूँ पर उनकी खोज खबर ही नहीं ली।"

"मामा का जो चार वर्ष हुये देहान्त हो गया। 'हार्ट' कमजोर हो गया था। और मामी कलकत्ता चली गईं।"

"कलकत्ता ! अच्छा, बड़ा अफसोस हुआ सुनकर।" यदुवंश ने बनावटी शोक प्रगट किया। फिर कहा।

"अच्छा तुम्हारे लिये चाय-वाय बनवाऊँ ?"

"नहीं-नहीं। फिर कभी ! इस समय चाय नहीं। कोई वक्त नहीं है !"

"नहीं रेणु आज कितने बरसों बाद तुम आई हो ! मुझे कितनी प्रसन्नता हुई है तुम्हें क्या मालूम !" दादा ने विह्वल होकर कहा और रेणु तो जैसे बिखर गई ! यदुवंश आज इतना स्नेह क्यों प्रदर्शित कर रहे हैं !

यदुवंश ने नौकर को बुला कर चाय और कुछ नाश्ता मँगवाया।

फिर चाय पीते-पीते काफी देर हो गई। यदुवंश बहुत अधिक आत्मीयता प्रदर्शित करता हुआ दुनिया भर की बातें करता रहा और रेणु के मन में एक विश्वास घर करता जा रहा था कि अब निश्चय ही उसका मामला ठीक हो जायगा ! यदुवंश जब उसमें इतनी दिलचस्पी ले रहा है तब अब सब ठीक हो जायगा।

अचानक यदुवंश ने पूछा, "तुम अकेली ही तो पटना आई हो न।"

"हाँ बिल्कुल अकेली।"

"तो एक बात मानोगी ?" यदुवंश ने अजीब ढङ्ग से कहा।

"हाँ जरूर ?" रेणु ने स्वीकृति दे दी।

"तो अपना समान यहीं उठा लाओ न ! यहाँ तुम्हें कोई कष्ट न होगा !"

"सामान ?" अचानक ही रेणु की साँस की गति तनिक तेज हो गया "बात ये है कि 'उनके' एक मित्र के यहाँ ठहर गई हूँ !"

"तो क्या हुआ ? सब समान ले आओ और रात यहीं रहो। कल सुबह ही तुम्हें लेकर 'होम मिनिस्टर' के यहाँ चलूँगा।"

क्षण भर कुछ सोचा रेणु ने फिर कह दिया, "देखिये, शाम को मैं आ जाऊँगी। फिर यहीं रह जाऊँगी। लेकिन सामान बामान वहीं रहेगा। उनसे कुछ कह दूँगी।"

यदुवंश को लगा जैसे धरती आकाश सब कुछ नाचने लगे हैं। वह यह विश्वास नहीं करता था कि रेणु रात को रह जायगी—इतनी आसानी से तैयार हो जायगी ?

वह जैसे गहरी नदी में डूबने उतराने लगा ? आज कैसा दिन है ? आज यह क्या होने वाला है। क्या रेणु ? तभी रेणु ने कहा।

"अब मैं चलती हूं ?"

यदुवंश के तो आधे होश उड़े हुये थे ? उसने 'अच्छा' कह दिया। फिर अपने को सम्हाल कर कहा, "तो शाम को खाना यहीं खाना !"

"अच्छी बात है।" कहकर कटाक्ष छोड़ती हुई रेणु बाहर निकली।

यदुवंश का दिल टूट-टूट कर बिखरने लगा। उसने कहा, "रुको रिक्शा मंगा दूं।"

"नहीं मेरा रिक्शा रुका हुआ है।" कहकर मुस्कुराती हुई रेणु बरामदे की सीढ़ियाँ उतर गई।

और यदुवंश दूर तक उसके रिक्शे को और रेणु के बड़े से जूड़े को कंगाल की तरह देखता खड़ा रहा। फिर जब वह कमरे में आया तो लड़खड़ा रहा था। आकर वह उसी कुर्सी पर बैठ गया जिस पर रेणु अभी तक बैठी थी और सोचने लगा—जब रेणु रात को आने को तैयार हो गई तो अवश्य ही उसके कहने पर रात भर 'अच्छी तरह' रह लेगी। और अगर रेणु ने उसकी बात मान ली तो वह उसके पति की बदली पटना में 'सेक्रेट्रियट' में कहीं करा लेगा और फिर सदा ही रेणु को अपने पास रखेगा—लड़कपन की एक छोटी सी भूल को कभी सुधारा भी जा सकता है। उसे लगा कि जो कुछ उसने भूल की थी उसे सुधार लेगा। रेणु अब पहले से भी अच्छी है—सुन्दर है—स्वस्थ है!

यदुवंश को लग रहा था कि अगर वह रेणु को हमेशा के लिये पटना बुलाने में सफल हो सके तो इससे बढ़कर बड़ी बात क्या हो सकती है जीवन में। वह फिर नये सिरे से अपना जीवन शुरू कर सकेगा! नया जीवन, रंगीन जीवन! फिर वह एक बार उस कमबख्त छोटू को भी बता सकेगा कि शोभना जैसी बेजात पाँत की लड़की पर ही उसे जो इतना नाज है वह सब उसके सुख के आगे कितना क्षुद्र है! उसकी प्रेयसी बनकर रेणु रहेगी तो क्या शोभना उसका जीवन में कभी भी मुकाबला कर सकेगी!

लगा कि उसके दिन पूरी तरह फिर गये हैं। खुदा देता है तो छप्पड़ फाड़ कर—कहां वह छोटी सी स्थिति का यदुवंश कहां यह, यश, मर्यादा और शान-शौकत और ऊपर से रेणु का खोया हुआ प्यार फिर से मिल जायगा !

और क्या चाहिये ! क्या किसी को कभी इससे अधिक सुख और शान्ति मिली होगी।

एक बार अब वह भर मुंह छोटू से बातें कर सकेगा।

यदुवंश का मन नाच रहा था—तेजी से नाच रहा था कि यदुवंश को लगा कि कहीं उसे चक्कर न आ जाए।

अपने को सम्हाल कर उसने नौकर को बुला कर कहा, "देख, आज खाना नहीं बनेगा। मेहमान आवेंगे। जरा एक तेज रिक्शा लाना। जाकर होटल से सामान का प्रबन्ध कर दूं। और हाँ, अगर कोई भी आये तो कह देना कि दो दिन अब मुझसे भेंट नहीं होगी। समझे ?"

शाम को रेणु आई। खाना खाने के बाद यदुवंश ने नौकर को रातभर के लिये छुट्टी दे दी।

और यदुवंश के जीवन में जैसे कोई चमकदार सितारा उदय हो गया। जीवन भर की एक कसक जो बोझ बनकर मन पर छाई थी उतर गई।

और रेणु रात भर 'अच्छी तरह' यदुवंश के साथ उसी के कमरे में रही। पहले से वह तैयार होकर आई थी। वह अफसर की बीबी थी अतः जानती थी कि आज के युग में कोई भी काम

कराने के लिये कुछ खर्च करना पड़ता है, कुछ देना पड़ता है। सो इतने बड़े काम के लिये यदुवंश को 'इच्छा पूर्ति' कोई मँहगा सौदा नहीं रहा।

रेणु प्रसन्न थी। सुबह ही 'होम मिनिस्टर' से मिल कर यदुवंश सब ठीक करा देगा। संसार में कोई क्या उसके सौदे के लिये दी गई कीमत के बारे में जान सकेगा? क्या उसका पति भी जान सकेगा?

सुबह कब हो गई सो रेणु को नहीं मालूम लेकिन यदुवंश काफी पहले उठकर और कपड़े बदल कर तैयार हो गया, फिर रेणु को जगा कर कहा, "डार्लिङ्ग! उठो, अब काफी दिन चढ़ आया है। मैं जरा आध घंटे के लिये जा रहा हूं। तब तक तुम तैयार हो जाना। होम मिनिस्टर के यहाँ चलना है।"

और सड़क पर आकर यदुवंश एक रिक्शे पर बैठ गया। रिक्शा स्टेशन की ओर बढ़ चला। यदुवंश को जल्दी ही पहुंच कर छोटू को बता देना है कि उसे कभी भी शोभना की चिन्ता नहीं रही। वह तो केवल छोटू और शोभना का 'ईमान' जाँच रहा था।

यदुवंश को रेणु ने नया जीवन दे दिया है। उसे जीवन में अभी बहुत बड़े-बड़े काम करने हैं। यही सोचकर उसने रिक्शे वाले को डाँटा "क्या घास खाता है तू! जल्दी क्यों नहीं चलता।"

यदुवंश के दिल की धड़कन की तरह रिक्शा की चाल भी तेज हो गई।